Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विज्ञान-लोक

Re. 1

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## अन्दर पढ़िए


मकड़ी का जाला ३
—राजेश कुमार

जब धरती कांपती है ६
—प्रसेनजित कुमार गागुंली

जब लाद चले हैं बनजारा ९
—

ब्रह्माण्ड में जीवन की खोज १३
—एन. कैसर

आधुनिक चिकित्सा पद्धति : उद्भव और विकास १८
—शशिभूषण पाठक

पौधे भी धन-संचय करते हैं २४
—सरला जैन

प्रयोगों की दिशा में २९
—निरंकार सिंह

प्रलय के बाद ३२
—कैलाश साह

कीड़े की देन : रेशम ४१
—रतनकुमार टण्डन

हाइड्रोजन से ग्रहों की यात्रा ४५
—चन्द्रकुमार मिश्र


## अपनी बात

अनन्त अन्तरिक्ष के अज्ञात रहस्यों के अन्वेषण की दिशा में आधुनिक विज्ञान अत्यन्त द्रुत गति से प्रगति कर रहा है। सोवियत रूस और अमरीका में इस क्षेत्र में जबरदस्त होड़ लगी है।

चन्दा मामा तो अब तनिक भी दूर के नहीं रहे—चन्द्र-यात्रा आज अति सामान्य विषय है। चन्द्रतल के अंश, वैज्ञानिक परीक्षण हेतु, भूतल पर लाये जा चुके हैं। मानव द्वारा स्थापित यंत्र चन्द्रलोक तथा चन्द्रगर्भ का भी अनुसन्धान कर रहे हैं।

चन्द्रमा के बाद मानव के लक्ष्य हैं मंगल और शुक्र। जब से मनुष्य ने शक्तिशाली दूर-बीनों द्वारा इस ग्रह पर नहरों जैसी धाराएं और ध्रुवों जैसे स्थल घटते-बढ़ते देखे हैं, तभी से इस पर जीवन होने के सम्बन्ध में अटकलें लगायी जा रही हैं।

अब मनुष्य के यंत्र-सज्जित यान मंगल की परिक्रमा करके इसके चित्र तथा अन्य उपयोगी सूचनाएं पृथ्वी पर प्रेषित कर रहे हैं। निकट भविष्य में ही मानव स्वयं मंगल पर पहुंच सके, इस हेतु आवश्यक तैयारियां तेजी से हो रही हैं। शुक्र तक भी मानव का यंत्र-सज्जित यान जा पहुंचा है और शीघ्र ही उस रहस्यमय लोक के गूढ़ भेद भी खुलने लगेंगे।

अज्ञात के अन्वेषण के प्रति मानव की यह जिज्ञासा शुद्ध वैज्ञानिक उद्देश्यों से प्रेरित जिज्ञासा है अथवा यह धरती पर मानव की सत्ता-भूख से प्रभावित है और अन्तरिक्ष में दौड़ का कुछ और ही उद्देश्य है तथा इसके कुछ और भी परिणाम हो सकते हैं? यह तो समय ही बतायेगा।


वर्ष १३

अंक २

एक प्रति : Re. 1.00
वार्षिक : Rs. 12.00

सम्पादक : शंकर मेहरा
प्रकाशक : मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा-३


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# मकड़ी का जाला

## विलक्षण कला का नमूना

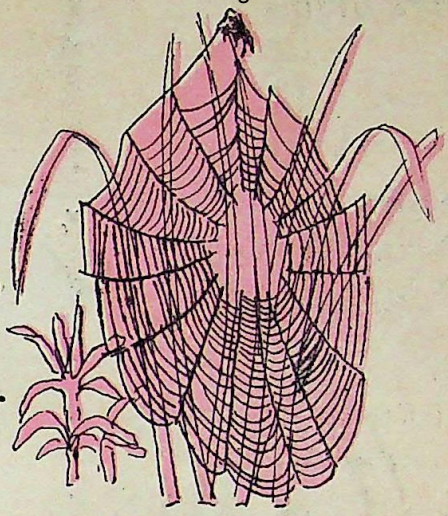

राजेश कुमार

चट्टानें हों या घास-पात, पुष्प-नाल हो या फूल-पांखुरी—४०,००० से भी अधिक जाति की मकड़ियों के तरह-तरह के जाले सर्वत्र मिल जायेंगे। मकड़ियां आपस में बातें करती हैं—विभिन्न भावनाएं व्यक्त करती हैं, और अपने सुन्दर जालों द्वारा भूख मिटाने का भी प्रबन्ध करती हैं।

**मकड़ी के जाले मकड़ी की अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं**

मकड़ी के जाले सहस्रों प्रकार के होते हैं और वे मकड़ी की अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। यदि जालों का एक धागा चट्टान पर चढ़ने-उतरने में सहायता करता है, तो दूसरा पत्तों के साथ बांधने के काम आता है। एक तार जाले में फंसे शिकार की सूचना देता है तो दूसरा खतरे का संकेत देता है। वास्तव में ये जाले मकड़ियों की आंखें, कान तथा अंगुलियों का काम देते हैं।

जाले बुनने की ग्रन्थियां मकड़ियों के पेट में होती हैं। सात विभिन्न ग्रंथियों से तन्तुवाय बाहर निकलती है। अधिकांश मकड़ियों में तीन जोड़े ग्रंथिल तन्तुवाय होते हैं जिनके छोर पर कातने वाली सूक्ष्म नलिकाएं होती हैं। वे मनुष्यों की अंगुलियों की भांति हिलती हैं। गूंथकर, मरोड़कर, ऐंठकर, धुनकर ग्रंथियों से निकलने वाले द्रव को ये आवश्यक रूप के धागे में बदल देती हैं।

**घर से निकल भागना : मकड़ी की आवश्यकता**

मकड़ी के जीवन में सबसे पहली आवश्यकता घर से निकल भागने की होती है ताकि उसके मां-बाप उसे खा न जायें। इसके लिए मकड़ी का बच्चा अपने बनाये एक श्वेत रंग के धागे पर खेतों तथा पर्वतों पर उड़ता है। इस यात्रा में वह निपुण सर्कस-कलाकारों जैसी उड़ानें भरता है। जब मकड़ी के बच्चे अण्डे से बाहर आते हैं, तब वे रेशमी धागे की सहायता से इसी प्रकार घर से गायब हो जाते हैं।

वसंत तथा शरद के आरम्भ में जब मकड़ी के बच्चे इस प्रकार उड़ते हैं, तब वातावरण मकड़जालों से भरा होता है। कहीं-कहीं तो वर्षा के साथ यह इतनी बड़ी मात्रा में नीचे गिरते हैं कि घास सफेद रेशम जैसी चादर से ढंक जाती है। जब चादर कुछ घनी हो जाती है, तब हवा उसे उड़ाकर ले जाती है और पेड़ों में अटका देती है।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

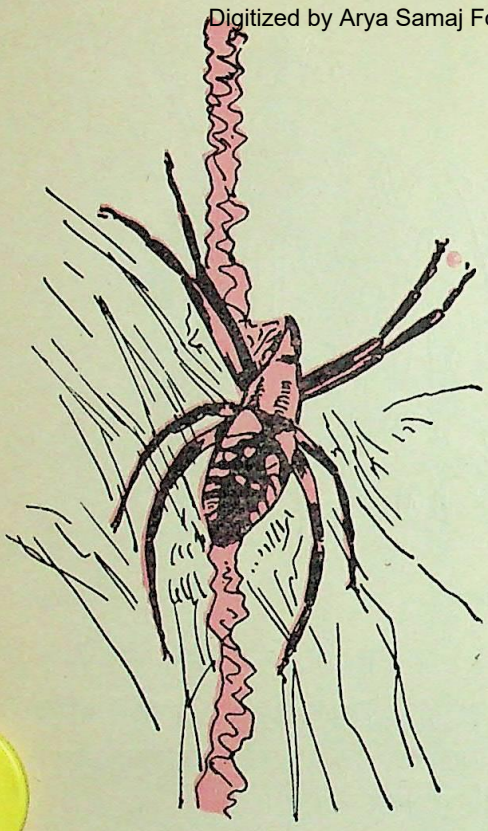

अपने जाले के केन्द्र पर शान्त बैठी मकड़ी धैर्यपूर्वक शिकार की प्रतीक्षा करती है

**भांति-भांति के धागे : अलग-अलग विशेषताएं**

साधारणतया गोजामर नाम के मकड़-जाल तन्तु उत्तम होते हैं। कुछ अन्य और भी हैं जो उनसे भी अधिक आश्चर्यजनक हैं। उदाहरणार्थ 'वाइल्ड थ्रेड्स' अर्थात् जंगली धागे इतने सूक्ष्म होते हैं कि वे दिखायी नहीं देते। ये धागे इतने मजबूत भी होते हैं कि उड़ता हुआ कोई भी कीट इनके सहारे नीचे तक जा सकता है। 'स्वैथिग बैंड' नामक मकड़ी का जाला सर्वाधिक चौड़े रिबनों के रूप में बनता है। 'ओर्ब' नामक मकड़जाला भी अत्यन्त सुन्दर होता है।

**मकड़ी : परभक्षी, लेकिन उत्तम कीटनाशी भी**

मकड़ी परभक्षी कीट है किन्तु उत्तम कीटनाशी भी है। यदि इनमें परस्पर-संचार संभव न हो तो ये एक-दूसरे का शिकार भी कर सकते हैं। इसलिए मकड़ी दूसरों के जालों का पूरा ख्याल रखती है।

यह कम आश्चर्यजनक नहीं कि मकड़ी की प्रजनन क्रिया सबसे अधिक जटिल है। सामान्यतः नर मकड़े का मादा की ओर बढ़ना खतरे से खाली नहीं होता। अतः नर मकड़ों को प्रकृति ने एक विचित्र क्षमता दी है जिसकी सहायता से वे अकेले ही जनन क्रिया सम्पन्न करके मादा को अंडाणु दे देते हैं और मादा के सहवास से पीछा छुड़ाते हैं।

'टैरनटुला' मकड़ी का ढंग और भी कौतुकपूर्ण होता है। इसका नर-मकड़ एक चादर बुनता है जिसमें दो छिद्र होते हैं, एक बड़ा, और एक छोटा। दोनों छिद्रों के बीच वह एक पतले रेशम की पट्टी छोड़ देता है। बड़े छिद्र से निकलकर वह उसके नीच लटक जाता है और उसके किनारों को मजबूत करता है। इस क्रिया में उसका शरीर उस रेशम को स्पर्श करता रहता है। स्पर्श की अनुभूति उसे शुक्राणु

ज्योंही एक टिड्डा जाले में उलझा, मकड़ी ने दौड़कर फुर्ती से उसके चारों तरफ और जाला बुन दिया

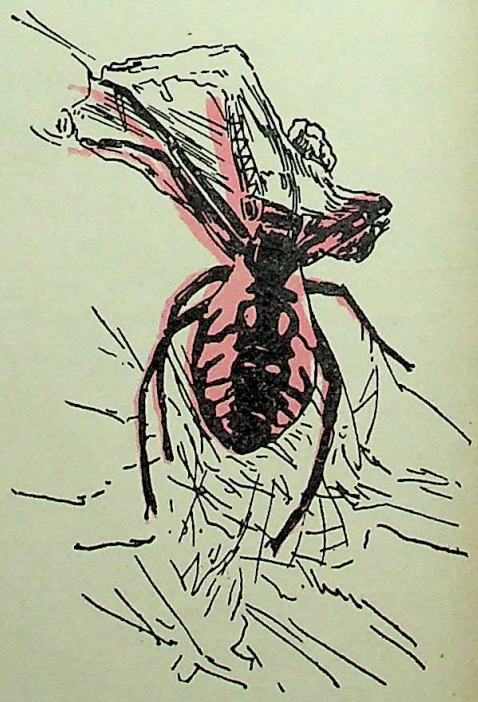



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

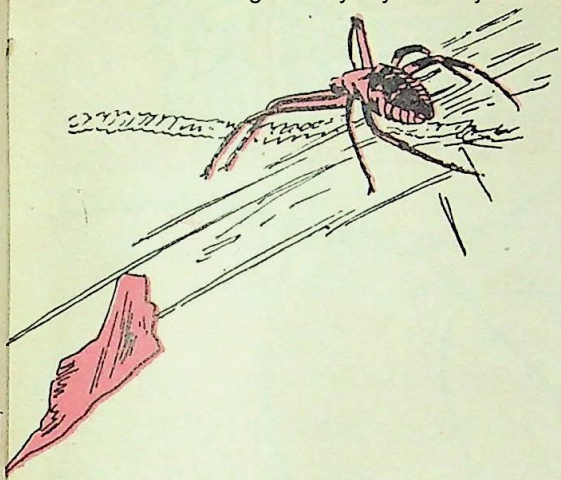

और जाले में लिपटे टिड्डे को डंक मारकर लटका दिया गया

अब बेचारा टिड्डा लटके हुए मरने को विवश है··· मकड़ी के लिए कई दिन का भोजन

निकालने के लिए प्रेरित करती है। तुरन्त ही रेंगकर चोटी पर जा पहुंचता है और बुनाई के चारों ओर पहुंचकर अपने सिर के पास पैर-जैसे उपांग की थैली में शुक्र द्रव को खींचता है। तत्पश्चात् वह मादा की ओर सहवास के लिए बढ़ता है। मादा प्रायः नर से आकार में बड़ी होती है और सहवास के लिए एकाएक तैयार नहीं होती। वह नर को बहुत तंग करती है, लड़ती है और प्रायः ही सहवास के बाद उसे खा जाती है।

मादा मकड़ी अपने अंडों के गिर्द बड़े विलक्षण जाले बुनती है। कहीं तो वे वातानुकूलित तथा जलरोधक तक होते हैं और कहीं अत्यन्त साधारण भी।

**घास की अनोखी मकड़ियां**

अधिकांश मकड़ियां कुछ फन्दों को तानकर बीच में बन्द कर देती हैं, किन्तु घास की मकड़ियां ऐसा नहीं करतीं। वे वर्षभर अपने जालों में वृद्धि करती रहती हैं। जब-जब पाला पड़ता है तब-तब खेतों में चादरें जैसी दिखायी देने वाली इन्हीं की कारीगरी होती है।

संसार के क्षुद्र जीवों में मकड़ी एक विस्मयकारी जीव है, प्रकृति के अद्वितीय कौशल का यह एक अद्भुत नमूना है। इसका लघु संसार विचित्र है जिसमें इसके जीवन की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति करने की पूरी-पूरी व्यवस्था रहती है। ●

## जादू-टोना और मकड़ी

जादू-टोनों के युग १७वीं-१८वीं शताब्दी में यूरोप में यह अन्धविश्वास था कि मकड़ी को ताबीज में बन्द करके गले में डालने से कुकर खांसी, दमा, तिजारी, पीलिया आदि रोग दूर हो जाते हैं।

मिस्र में अब भी मकड़ी सौभाग्य सूचक मानी जाती है—वहां नवविवाहित दम्पति की सुहाग सेज पर मकड़ी छोड़ देने की प्रथा प्रचलित है।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# जब धरती काँपती है

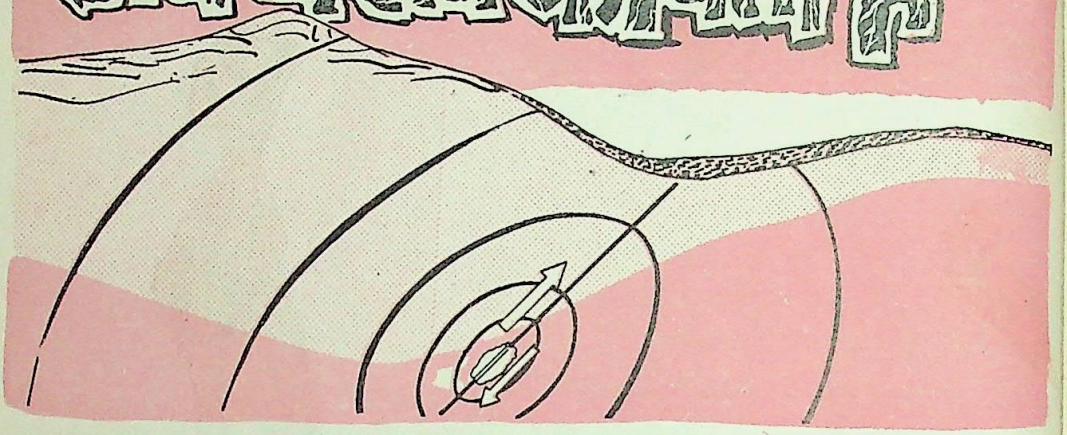

प्रसेनजितकुमार गांगुली 'गिरधर'

भूकंप हमारे हृदय में कंपन पैदा कर देता है, यह कहने या सुनने की बात नहीं। इस सम्बन्ध में समय-समय पर वैज्ञानिकों ने अनेक तथ्य हमारे सामने रखे। अब भी भूकंप के बारे में खोज चल रही है। इसके सम्बन्ध में आज तक जो तथ्य हमारे सामने आये वे कुछ इस प्रकार हैं :

**कुसंस्कार और अन्धविश्वास पर आधारित पुराने सारहीन तथ्य**

बहुत पहले से भूकंप के बारे में जो कुछ भी हम जानते आये हैं वह है दैवी प्रकोप या प्रकाण्ड अजगर के मस्तक पर भू-तल का टिका रहना। ये अन्धविश्वास हम भारतवासियों के लिए ही हैं, यह बात नहीं। विश्व के प्रायः सब स्थानों पर किसी न किसी रूप में ये अन्धविश्वास हमें दिखलायी देते हैं।

यहूदी लोगों के अनुसार धरती एक प्रकाण्ड दैत्य के ऊपर टिकी हुई है। जब दैत्य चलता है तो भूकंप आ जाता है। उत्तरी अमेरिका के रेड इंडियनों का मत है : 'यह धरती एक कछुए की पीठ पर स्थित है। जब वह चलता है, धरती पर कम्पन पैदा हो जाता है।' दक्षिण अमेरिका के लोग कहते हैं, 'बड़ी ह्वेल की पीठ पर धरती स्थित है।' जापानियों के अनुसार धरती के नीचे मकड़ी के समान एक भयंकर शक्तिशाली दैत्य रहता है। चीनियों के अनुसार मछली की पूंछ पर धरती बसी हुई है, तो मंगोलिअन कहते हैं कि मेंढक के ऊपर धरती बसी हुई है। जब यह चलता या हिलता है तो धरती हिलती है।

आधुनिक युग में भी इन अन्धविश्वासों पर चलने वाले लोगों की कमी नहीं है। अठारहवीं शताब्दी में पुर्तगाल के लिसबन में एक भयंकर भूकंप आया था। इसमें मरने वालों की कमी नहीं रही। प्रकृति की गोद में आशा से अधिक व्यक्ति विलीन हो गये। जो कुछ बचे वे अपाहिज होकर जीवन के काले दिनों को याद करके जीने लगे। यहां जो बचे उन्होंने कहा, 'लिसबन में प्रोटेस्टेंटों की उपस्थिति के कारण यह भूकंप आया है।' इधर इंगलैण्ड के धर्मगुरुओं ने अपनी घोषणा में कहा, 'चूंकि लिसबन रोमन कैथोलिकों का स्थान था, ईश्वर ने उन्हें इस रूप में समाप्त कर दिया।'



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन अंधविश्वासों का न कोई आधार है न ही इन्हें कोई गुरुत्व प्रदान किया जा सकता है। साहित्यकारों द्वारा उस समय कहानियां बनी होंगी। लोगों ने पढ़कर उन्हें सच्ची माना और उसके अनुसार अपने को भी एक असत्य के आधार पर आगे बढ़ा दिया। ये अन्ध-विश्वास उस समय की अशिक्षा, असहायता तथा कुसंस्कारों का बोध कराते हैं। अगर सर्प, कछुए, मेंढक, मछली की पूंछ, ह्वेल या किसी दैत्य पर पृथ्वी टिकी हुई है तो यह स्पष्ट होता है कि पृथ्वी थाली की तरह चपटी है न कि नारंगी की तरह गोल! और उपरोक्त जीवों के हिलने से अगर भूकंप आता है तो सारी पृथ्वी पर ही भूकंप होता न कि किसी भू-खण्ड पर।

**वैज्ञानिक तथ्य**

युगों पूर्व एक भारतीय ज्योतिर्विद वराह-मिहिर ने भूकंप के बारे में कुछ कहा था। उनके अनुसार वायुमण्डल की ऊपरी तथा निम्न सतह के दबाव में किन्हीं कारणों से अगर परिवर्तन आ जाता है, तो ग्रहों के मध्या-कर्षण में असामंजस्य पैदा हो जाता है। फल-स्वरूप धरती हिलने लगती है, या भूगर्भ के भौगोलिक पदार्थों के ताप विकिरण के कारण भूकंप होता है।

वराहमिहिर के अलावा भी अन्य भार-तीय वैज्ञानिकों ने इसके बारे में कुछ तथ्य हमारे समक्ष रखे थे। उन वैज्ञानिकों का मत था अतिवृष्टि या भूगर्भ स्थित तरल पदार्थों की अवस्था में परिवर्तन के कारण एक प्रकार का कम्पन पैदा होता है, जिसे भूकंप कहते हैं।

सत्रहवीं शताब्दी के आसपास भूकंप के सम्बन्ध में विश्व के अन्य वैज्ञानिकों ने भी खोज आरंभ की। उनके सम्मिलित अन्वेषणों से जो जाना गया वह भारतीय वैज्ञानिकों के उपरोक्त तथ्यों पर ही आधारित था।

इन वैज्ञानिकों के अनुसार धरती की ऊपरी सतह ग्रेनाइट शिलाओं की बनी है जो लगभग ६० किलोमीटर मोटी है। इस सतह के नीचे धातुओं की सतह है। इन दोनों कठिन सतहों के मध्य में एक भीषण ताप-शक्ति छिपी हुई है।

**भूकम्प : एक कारण**

कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार यह ताप-शक्ति इतनी अधिक है कि भूगर्भ स्थित धातुएं अपनी प्राकृतिक अवस्था में नहीं रह सकती हैं। वे या तो तरल हो जाती हैं या गैसीय अवस्था में विचरण करती हैं। इन तरल या गैसीय पदार्थों के ऊपर ही यह धरती चूंकि टिकी हुई है तो एक चाप भी ऊपर से पड़ रहा है। अब किन्हीं कारणों से अगर ऊपरी चाप में कोई अन्तर पैदा हो जाता है, यह परिवर्तन अधिक भी हो सकता है और कम भी, तो एक कम्पन पैदा हो जाता है, जो भूकंप है।

कुछ अन्य वैज्ञानिकों का मत है कि पृथ्वी की सतह सब स्थानों पर एकसी मोटी नहीं है। जब भूगर्भ स्थित गैसीय या तरल धातुओं पर दबाव पड़ता है तो वे ऊपर की तरफ दबाव डालती हैं। फलस्वरूप जिस

भूकम्प के कारण कभी-कभी धरती में बड़ी लम्बी और गहरी दरारें पड़ जाती हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थान पर भूस्तर कमजोर है, वहां से धातुएं लावा के रूप में निकल पड़ती हैं जिसे ज्वालामुखी कहते हैं, जो भूकंप के लिए उत्तरदायी है। लेकिन अनेक स्थान ऐसे हैं जहां ज्वालामुखी पर्वतों के नाम भी नहीं, फिर भी भयंकर भूकंप आते हैं। कैसे ?

वैज्ञानिक कहते हैं कि पृथ्वी की भीतरी ऊष्मा के कारण रेडियम नामक एक धातु की उत्पत्ति होती है जो परोक्ष रूप से भूकंप के लिए उत्तरदायी है।

भूकंप के सम्बन्ध में रूसी वैज्ञानिकों का मत है कि ताप के अधिक मात्रा में अपचय के कारण पृथ्वी के उस स्थान पर जिसके नीचे यह अपचय अधिक होता है, थोड़ा संकुचन पैदा हो जाता है, जो भूकंप है।

कुछ वैज्ञानिक कहते हैं कि पृथ्वी चूंकि सम्पूर्ण गोल नहीं है (पृथ्वी उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्द्ध पर चपटी है), इस कारण अन्य ग्रहों के मध्याकर्षण में एक तारतम्य पैदा हो जाता है जिससे भूकंप आता है।

विश्व के विख्यात वैज्ञानिक वेगनर और सी. ई. डॉटन ने भूकंप के सम्बन्ध में जो तथ्य दिये हैं वे काफी महत्त्वपूर्ण हैं।

वेगनर के अनुसार : "ग्रेनाइट तथा अन्य शिलाओं से गठित भूखण्ड अधिक घनयुक्त तरल धातु पदार्थों पर तैरती अवस्था में है। बहुत वर्षों से भूगर्भ स्थित यह गलित धातु पृथ्वी को अपने ऊपर टिकाये हुए है। किन्हीं कारणों से पृथ्वी के भार में अन्तर पड़ने पर अपनी स्थिति स्थिर रखने के लिए धरती हिलती है जिसे भूकंप कहते हैं।"

डॉटन के अनुसार : "शैशव में पृथ्वी ताप-संचरण करके धीरे-धीरे शीतल तथा निष्प्रभ हो गयी। इस क्रिया में जमी हुई वाष्प ने पानी का रूप लिया तथा लगातार कई वर्षों तक वर्षा के रूप में बरसता रहा। लगातार वर्षा के कारण भूस्तर डूब गया और पृथ्वी के संकुचन के कारण स्थल भाग की सृष्टि हुई। वर्षा के घर्षण से भूस्तर समाप्त होता गया और अपेक्षाकृत निम्न स्थान पर जमने लगा। लगातार निम्न स्थान पर जमने की क्रिया के फलस्वरूप पृथ्वी का एक भाग भारी हो उठा और तिरछा हो गया। पर अन्य ग्रहों के आकर्षण के कारण इसे अपनी स्थिति स्थिर भी तो रखनी थी। इस तरह अपनी स्थिति सामान्य रखने के कारण वह हिली और यह हिलना भूकंप के नाम से जाना गया।"

हाल ही में भूकंप के सम्बन्ध में एक और तथ्य प्राप्त हुआ है। किसी पहाड़ की सलवटों के मध्य दरार देखकर कुछ वैज्ञानिक इस सिद्धान्त पर पहुंचे कि पृथ्वी निरन्तर संकुचित या प्रसारित हो रही है। इस संकुचन और प्रसारण के कारण कभी-कभी भूकंप आ जाता है। एक पूर्ण संकुचन और पूर्ण प्रसारण को कुल कम्पन कहते हैं।

कहा जाता है कि पृथ्वी का एक कम्पन अठारह करोड़ वर्ष अर्थात् एक छायापथ वर्ष में होता है। (सूर्य अपने छायापथ में एक बार परिभ्रमण करके जो समय लगाता है उसे एक छायापथ वर्ष कहते हैं।) प्रति कंपन के आरंभ में या अन्त में एक प्रलयकारी भूकंप आता है। इस भूकंप में भूस्तरों और भूस्तरों के नीचे आमूल परिवर्तन होता है।

अठारह करोड़ वर्ष का यह समय बहुत ही लम्बा समय है। इस कारण इस दौरान भूकंप में बढ़ोत्तरी होती है या नहीं, यह तो अनुमान से ही सिद्ध किया जा सकता है, परीक्षण संभव नहीं।

अभी भी भूकंप के बारे में विभिन्न देशों में विभिन्न प्रकार से परीक्षण और खोज किये जा रहे हैं। आशा की जाती है कि अगले कुछ वर्षों में इस बारे में हम कुछ और जान पायेंगे।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

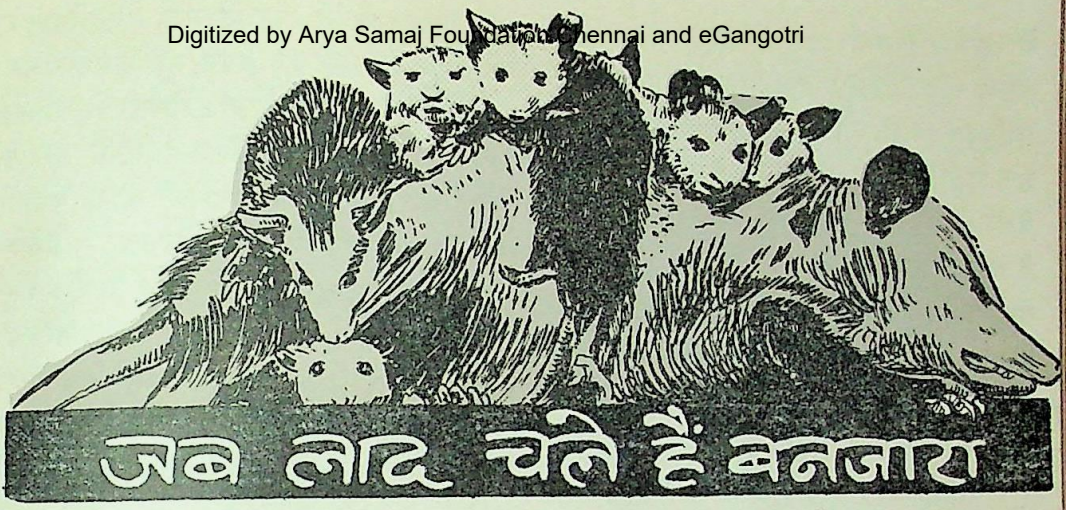

# जब लाद चले हैं बनजारा

नन्हे-मुन्नों को मां की गोद में या बाप के कंधे पर चढ़ना बड़ा प्यारा लगता है। मनुष्यों में ही क्यों, जन्तुओं में भी यह लाड़-चाव सहज दिखायी देता है। बंदरिया हो या कुतिया, बिल्ली हो या चुहिया, मेंढकी हो या मछली रानी—जिसको जहां सहज पड़ता है, अपने नन्हे-मुन्ने को चिपकाये फिरती है। इसमें ममता तो अधिकांश होती ही है, नन्हों को पालने-पोसने और अपने पांवों पर खड़ा होने तक सहायता करने की भावना का भी उतना ही भाग होता है। मछलियों में केवल एक वर्ग ऐसा है, जिसमें मां का बोझ पिता को ढोना पड़ता है, अन्यथा यह भार तो केवल माताओं के ही हिस्से में आया है।

**पूरा कुनबा पीठ या पेट पर**

अधिकतर आस्ट्रेलिया में पाये जाने वाले चार-पांच स्तनपायी प्राणी ऐसे हैं जो बनजारे की तरह अपने कुनबे को पीठ या पेट पर चिपकाये चलते हैं। उनमें मुख्य हैं कंगारू और अन्य हैं रीछ वर्ग के कोआला, टास्मानियन डेविल तथा अमरीका का आपोसम। अधिक प्रचलित प्राणियों में बन्दर, लंगूर और चमगादड़ भी इसी विशेषता में गिनाये जा सकते हैं।

**कंगारू के तीन बच्चे माचिस की डिब्बी में**

आस्ट्रेलिया का कंगारू विशेष उल्लेखनीय है। बड़ा होने पर एक भरा-पूरा कंगारू दौड़ने में हिरन को हरा सकता है और लात मारने में घोड़े से भी बढ़कर होता है। वह जन्म

**कंगारू के पेट की थैली बच्चे की 'सीट' है**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से कुछेक सप्ताहों तक अपनी मां के पेट में रहता है। इतना नन्हा होता है कि तीन भाइयों को एक माचिस की डिब्बी में आराम से सुलाया जा सकता है। मादा कंगारू अपने पेट के आगे की थैली में नन्हे को बैठाये पूरी गृहस्थी सम्हालती है और दिनभर घूम भी लेती है। जैसे-जैसे नन्हे के हाथ-पांव निकलते हैं, वह मां को सोता देखकर चुपके से पेट की थैली के बाहर फुदक आता है और नरम-नरम घास में दो-चार मुंह मारकर फिर अपनी सीट में समा जाता है। तनिक और बड़ा होने पर मां के लिए जब उसे पेट में लटकाये फिरना दूभर हो जाता है तब थोड़ा-थोड़ा उससे सटता हुआ उसके बराबर चलता, उछलता है और खटका होने पर मां की पीठ पर सवार हो जाता है।

**मां की पीठ पर मौज**

यही बात कोआला नामक छोटे कद के रीछ की है। इसमें तो नन्हें को मां की पीठ पर ही मौज रहती है। मां भी चाहे कितनी ऊंची डाल पर जा चढ़ी हो, अपने मुन्ने को पीठ पर बखूबी चिपकाये रहती है। बिल्ली से तनिक बड़े आकार का प्राणी टास्मानियन डेविल और भी दिलचस्प है। इसकी मादा बच्चों को जिन थैलियों में लटकाये चलती है, उनके मुंह पीछे को होते हैं। उनमें बच्चे उलटे प्रवेश करते हैं। तब मालूम होता है मानो चलती हुई कार में कोई उलटी दिशा में मुंह किये बैठा हो। यह मादा छोटी-छोटी भेड़-बकरियों और मुर्गियों के शिकार करके अपना और अपने कुनबे का पालन करती है।

**एक पलटन सयानी हुई नहीं कि दूसरी का जन्म**

अमरीका में पाया जाने वाला ऐसा ही प्राणी आपोसम औसत बिल्ली से बड़ा नहीं होता। इसके पंजों में अंगुलियां स्पष्ट होने के कारण इसे हरेक वस्तु पकड़ने में भी सुविधा रहती है। यह प्राणी दिनभर तो पेड़ों में छिपा

**आपोसम अपनी पीठ पर बच्चों को चिपकाये हुए मजे में कूदफांद करती रहती है**

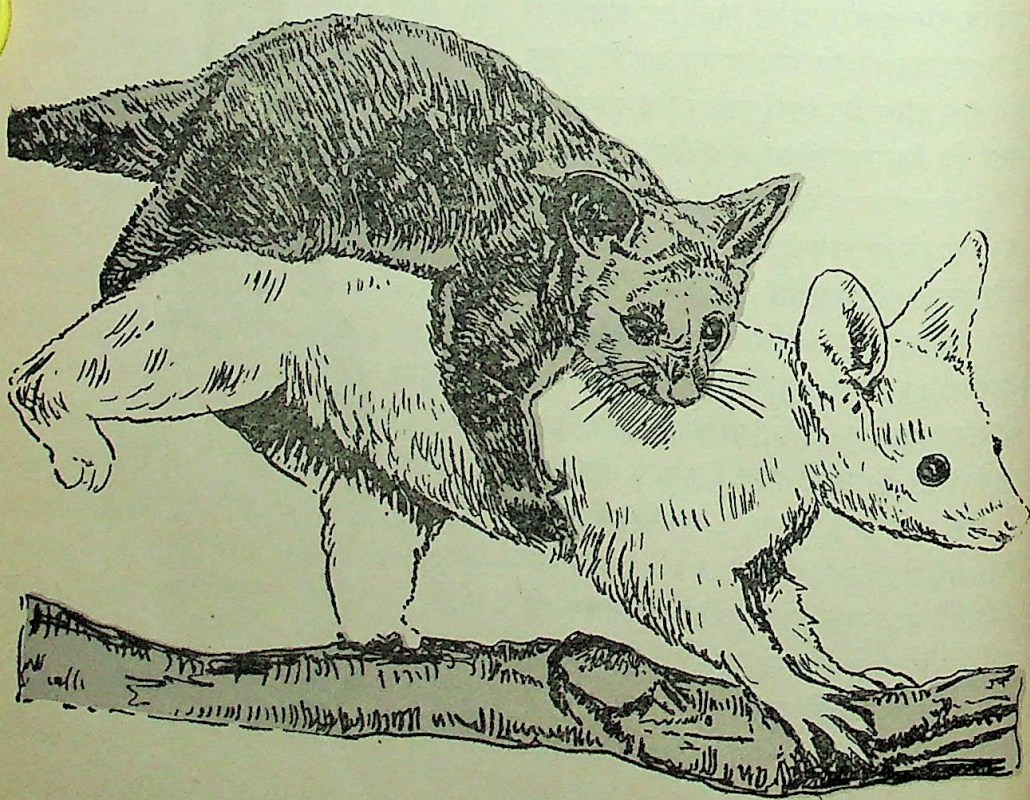



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोया रहता है और रात में शिकार की खोज में निकलता है। पक्षियों के चूजे, अण्डे, गिलहरियां और जो कुछ फल मिल जायें, उन्हें बटोर लाता है। ये अपनी मां के पेट से एकसाथ दस-बारह की संख्या में जन्म लेते हैं। थोड़े सयाने होने पर जब इन्हें पेट में लादे चलना कठिन हो जाता है तब मां इन्हें अपनी पीठ पर चिपका लेती है। कभी-कभी ऐसा भी संयोग बन जाता है कि जब तक एक पलटन सयानी हो पाती है, दूसरी जन्म ले लेती है और तब एक-एक मादा दो-दो दर्जन की मानो दो टीमों को पेट और पीठ पर लादे चलती है।

**अनोखा चमगादड़**

चमगादड़ पंखधारी उड़ने वाला स्तनपायी जीव होने पर भी घोंसला बनाने की तकलीफ कभी नहीं उठाता। उसका काम है दिनभर पेड़ के अंधेरे कोने में उलटा लटके रहना। उसकी मादा के बच्चे भी अपनी मां

**ऊंची डालों पर भी कोआला की पीठ पर बच्चा सुरक्षित है**

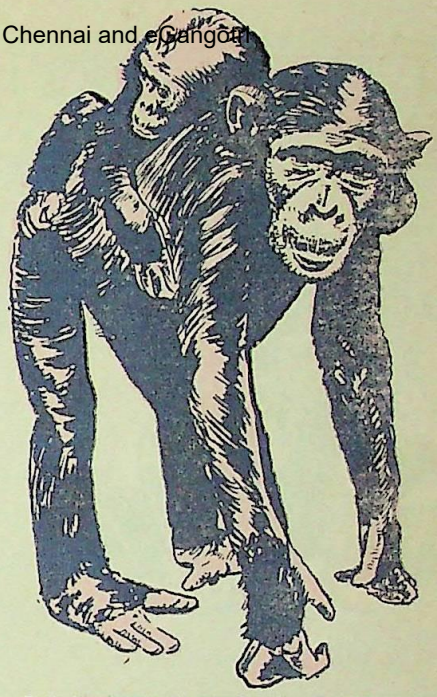

**इस बेबी चिम्पांजी को भी गिरने का कोई खतरा नहीं**

के शरीर से चिपके लटके रहते हैं। वे नहीं जान पाते कि डाल पर बैठना या नरम घास में चलना किसे कहते हैं। रात पड़ते ही उनकी मां शिकार की खोज में उड़ानें भरती फिरती है, तब भी बच्चे चिपके ही रहते हैं। आंखें होते हुए भी चमगादड़ अंधेरे में आंखों से काम नहीं लेता। उसकी अपनी चीं-चीं की ध्वनि और प्रतिध्वनि पर बिना टकराये तेज उड़ानें भरना तो इतना प्रसिद्ध है कि उसका लोहा विज्ञान तक को मानना पड़ा है। प्रतिध्वनि के सहारे ही वह अपने लक्ष्य पर ऐसे छिपे चूहे या अन्य शिकार को पकड़ लेता है, जिसका देखना हमारे लिए तो सम्भव नहीं।

**नर महाशय लम्बी तानकर सोते हैं, और मादा**

बंदरों, लंगूरों और विशेषतः चिम्पांजियों में मां की ममता देखते ही बनती है। पेड़ों की ऊंची डालों पर छलांग भरते हुए भी इनकी मादा अपने बच्चों को पीठ से चिपकाये रहती है। रात को सोने के लिए इनके नर महाशय अकेले आराम से लम्बी तानकर सोते हैं, परन्तु



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेंढकी की पीठ पर बच्चों की पूरी पलटन सवार रहती है

मादा नये आये मेंढकों को शरीर से सटाकर, बड़ी चौकसी से सोती है।

**पिता के पेट की सुरंग में बच्चे**

जल-जीवों में जहां कुछेक मेंढकियों को अपनी पीठ पर बच्चे लादे हुए देखा जा सकता है, वहां पाइप फिश नामक एक लम्बी, पतली मछली का नर पिता के साथ-साथ माता की भी जिम्मेदारी उठाता है। इसके पेट के अगल-बगल एक लम्बी नली बनी रहती है, जिसमें मादा अण्डे दे देती है। बाकी सब काम नर महाशय का रह जाता है कि अण्डों से बच्चे निकलने तक और नन्हें-मुन्ने सयाने होने तक गृहस्थी का भार वही उठाये। बच्चे सयाने हो जायें फिर भी साथ चलता हुआ पिता यदि संकट सामने आता देखता है तो अपनी पेट की सुरंग का मुंह खोल देता है और बच्चे लदर-फदर उसमें समा जाते हैं!

---

## प्रलयंकर प्रभंजन

वायु—जो जीवधारियों को जीवन प्रदान करती है—जब कुपित होकर अत्यन्त तीव्र गति से चलती है तो व्यापक विनाश, संहार करती है। तब यह झंझावात, प्रभंजन या साइक्लोन कहलाती है। जमीन पर चलने वाली आंधियों की अपेक्षा समुद्री तूफान अधिक विनाशकारी होते हैं क्योंकि इनसे जल-प्लावन हो जाता है, बाढ़ें आ जाती हैं जो सब कुछ अपनी लपेट में लेती चलती हैं।

विश्व में विगत २५ वर्षों में ७०० से अधिक भयंकर समुद्री तूफान आये हैं जिनमें ८ लाख से अधिक मानव मृत्यु के ग्रास बने हैं। नवम्बर १९७० में पूर्वी बंगाल में जो समुद्री तूफान आया था वह सर्वाधिक विनाशकारी था। १९७० के वर्ष में संसार में ७२ भीषण समुद्री तूफान आये थे।

प्रकृति के इन प्रकोपों को रोका तो नहीं जा सकता, किन्तु मौसम की भविष्यवाणी के समान इनके बारे में भी भविष्यवाणी करके उस क्षेत्र की जनता को सावधान किया जा सकता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा नियुक्त वर्ल्ड मीटियोरोलाजिकल आर्गेनाइजशन इस दिशा में प्रयत्नशील है।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# ब्रह्माण्ड में जीवन की खोज

एन. कैसर

ब्रह्माण्ड के आधुनिक ज्ञान ने ब्रह्माण्ड और इसके असीम विस्तार का जो चित्र प्रस्तुत किया है, वह हमारे पिछले सभी ज्ञान एवं अनुमान से सर्वथा भिन्न है। इसका अनुपम विस्तार एवं सौंदर्य, इसकी विशालता तथा इसमें सर्वव्यापी सम्भावनाएं हमारे विस्मय का विषय बन गयी हैं।

हमारा जीवन सौरमण्डल के एक सीमित क्षेत्र में परिमित है, जो नक्षत्र-जगत का एक तुच्छ-सा अंश है। विज्ञान की वेगमय प्रगति के बावजूद इस विराट विश्व-संस्थिति में मनुष्य का स्थान नगण्य है।

**जीवन का अस्तित्व ग्रहों पर ही सम्भव है**

जीवन का अस्तित्व जैसा कि हमें मालूम है, ग्रहों पर ही सम्भव है, और ग्रह सर्वदा किसी न किसी तारे से सम्बद्ध हुआ करते हैं, जिनसे ग्रहों को प्रकाश एवं गरमी मिलती है। सूर्य भी एक नक्षत्र ही है जो नक्षत्रों में हमसे निकटतम है। हमारी पृथ्वी, जो ग्रह है, रोशनी व गरमी करने के लिए इसी से संलग्न है। ब्रह्माण्ड की वृहदता का यह हाल है कि सूर्य को छोड़कर दूसरे निकटतम तारे भी हमसे खरबों किलोमीटर दूर हैं। सेण्टारी तारा, जो हमसे सर्वाधिक समीप है, कोई ४ प्रकाश-वर्ष दूर है, जबकि प्रकाश का वेग प्रति सेकण्ड लगभग ३ लाख किमी है। रूसी नक्षत्रवेत्ता 'लूमारूफ' के अनुमान के अनुसार यदि हम एक 'जेट' पर बैठ कर, सूर्य के बाद सबसे पहले सितारे तक पहुंचना चाहें तो लगातार ३० लाख साल तक सफर करना पड़ेगा। स्वयं प्रकाश को एक नक्षत्र से दूसरे नक्षत्र तक पहुंचने में कई-कई साल लग जाते हैं। इस असीम अंतरिक्ष को देखते हुए यह नहीं कहा जा सकता कि जीवन का अस्तित्व केवल भूलोक तक ही सीमित है। हमें ज्ञान एवं विश्वास की रोशनी में यह सम्भावना तो स्वीकार करनी ही पड़ेगी कि इस अपरिमित ब्रह्माण्ड के अन्य भागों में दूसरे ग्रहों पर जीवन का अस्तित्व है, यद्यपि अभी हमें इस स्थिति का ज्ञान नहीं···। परन्तु अंतरिक्ष की खोज के इस युग में अब यह विश्वास बढ़ता जा रहा है कि अन्य सौरमण्डलों के उन ग्रहों पर भी जीवन संभव है, जहां परिस्थितियां अनुकूल हैं।

**कोई एक सूर्य औसत फासले का होना चाहिए**

जीव तत्त्व की गति व्यवस्था एवं संघटन की एक विशेष जटिल एवं दुर्बोध तथा दक्षतम आकृति है। जीवन, जैसा कि हमें ज्ञात है, कई मौलिक आवश्यकताओं पर आश्रित है। गरमी तथा रोशनी के लिए एक सूर्य औसत फासले पर होना चाहिए, काफी पुराना एक ग्रह होना चाहिए जिसमें जीवन और सभ्यता फलफूल सके। नक्षत्र और ग्रह की गति आदि में अनुकूलता हो, ताकि गरमी और रोशनी



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की प्राप्ति के साथ ही साथ शर्तें भी ऐसी धारण और जीवन विषयक सुलभ हो सकें, अन्यथा जीवन और उसकी अनिवार्यताएं स्थिर नहीं रह सकतीं। फिर यह भी आवश्यक है कि हमारी पृथ्वी-जैसी वृहद एवं विस्तृत जीवनदायक और आर्थिक व्यवस्था उपलब्ध हो जो जीवन को निरन्तर और स्थिर रख सके।

इन आधार तत्त्वों को सामने रखते हुए हमारे सौरमण्डल के दूसरे ग्रहों पर जो भौतिक तथा रासायनिक स्थितियां वर्तमान हैं इनकी खोजबीन की गयी है, और उनकी तुलना उन परिस्थितियों से की गयी जो जीवन के लिए अनुकूल हैं और इससे यह परिणाम निकाला गया कि इनमें से कतिपय ग्रहों (चन्द्रमा सहित) पर जीवन के मौलिक लक्षणों की सम्भावना हो सकती है।

सबसे पहले चन्द्रमा को लीजिए। अंतरिक्ष में यह हमारा निकटतम पड़ोसी है। चन्द्रमा के रात और दिन हमारी पृथ्वी की तुलना में १४ गुना बड़े होते हैं। वहां न कोई वातावरण है और न हवा-पानी का अस्तित्व ही है, अतः किसी आवाज का पैदा होना भी असम्भव है। बातचीत करने के लिए जटिलतम वायरलेस विधियों की आवश्यकता होगी। चन्द्रमा पर रोशनी और अन्धेरे के अतिरिक्त और कोई रंग नहीं है। सूर्य के सामने आने वाला भाग प्रकाशित और गरम हो जाता है। यह गरमी १००° सेंटिग्रेड से भी अधिक होती है। जो भाग सूर्य की ओर नहीं होता वह अन्धकारमय तथा ठण्डा, –२८५° सेंटिग्रेड तक हो जाता है।

**चन्द्रमा पर विचित्र परिस्थितियां**

जहां तक वातावरण का प्रश्न है, परिस्थितियां और भी विपरीत हैं। वातावरण के अभाव में वहां न रंगों की चित्र-विचित्रता है, न उसका सुहानापन, न अरुणोदय की लाली है और न सावन की घटाएं वरन् दूर-दूर तक ऊंचे स्थल फैले हुए हैं। इसलिए चन्द्रमा पर जीवन का अस्तित्व संदिग्ध है। लेकिन कुछ विज्ञानवेत्ता चन्द्रमा पर जीवन की प्रारम्भिक आकृतियों की मौजूदगी स्वीकार करते हैं जिसका कारण चन्द्रतल पर ज्वालामुखी पर्वतों का अस्तित्व है जो कहीं-कहीं अनुकूल तापक्रम का पता देते हैं। परन्तु अपोलो ११ ने अब यह सिद्ध कर दिया है कि चन्द्रमा पर किसी प्रकार का जीवन नहीं है।

**जीवन विहीन बुध ग्रह**

बुध ग्रह में भी जीवन धारण की कोई सम्भावना प्रतीत नहीं होती, क्योंकि बुध सूर्य की ओर से प्रथम ग्रह है, जिसके बाद शुक्र और पृथ्वी की परिधियां आती हैं, इसलिए बुध अति उष्ण एवं तप्त ग्रह है, और वातावरणविहीन भी। चन्द्रमा की भांति अन्तरिक्ष में बुध की परिभ्रमण गति भी ऐसी है कि इसका एक भाग सर्वथा सूर्य से विपरीत दिशा में रहता है, जहां घोर अंधकार तथा शीत का साम्राज्य है। यहां हीरे-जवाहरात के ढेर उपलब्ध हो सकते हैं, सोने-चांदी की खानें मिल सकती हैं, परन्तु बुध में वर्तमान परिस्थितियों में जीवन का आविर्भाव तथा विकास सम्भव नहीं है।

इसके बाद शुक्र ग्रह आता है जिसके ऊपर हमेशा घने बादल छाये रहते हैं और यह पिण्ड छिपा रहता है। यही कारण है कि इसकी भौतिक स्थिति के विषय में अधिक ज्ञान हमें प्राप्त नहीं है, फिर भी रेडियो तरंगों और रैडार दूरदर्शी की सहायता से जो सूचनाएं प्राप्त हुई हैं, उनके आधार पर यह अनुमान लगाया गया है कि तापक्रम शून्य से ३००° सेंटिग्रेड नीचा होगा। फिर, यह कि ग्रह के वातावरण में नाइट्रोजन तथा कार्बन-डाइआक्साइड की मात्रा पृथ्वी की तुलना में सैकड़ों गुना अधिक है, जिसने शुक्र



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के माहौल को गरम, जहरीला और पानी प्रतिकूल बना रखा है।

परन्तु इसके विपरीत अमेरिका के कुछ वैज्ञानिक शुक्र के वातावरण में जल-कण की मौजूदगी प्रमाणित करने में सफल हुए हैं। इसी आधार पर यह अनुमान भी लगाया गया है कि इस ग्रह की सम्पूर्ण सतह पानी की ठोस मोटी तह से आवृत्त है, बल्कि कतिपय नक्षत्र-वेत्ताओं का यहां तक विचार है कि शुक्र ग्रह पर पानी की प्रचुरता है।

**सम्भव है शुक्र पर जीवन का विकास हुआ हो**

शुक्र ग्रह भी प्रायः हमारी पृथ्वी के बराबर है। इस ग्रह के विषय में हमारी कल्पना में एक और चित्र भी आता है। सम्भव है, अपनी विशिष्ट परिस्थितियों के अधीन वहां अपने ढंग पर चेतनायुक्त जीवन का विकास हुआ हो। यह भी सम्भव है कि बाह्य आवरण के नीचे शुक्र ऐसे साधनों से भरपूर ग्रह हो जैसी हमारी पृथ्वी है। ऐसी दशा में वहां के चेतनायुक्त जीवन के विषय में सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। वहां का जीवन हमारे मुकाबले में अत्यन्त न्यून चेतना व सूचना का परिचायक होगा, क्योंकि बाह्य विश्व से पर्दे में होने के कारण उसे अपने विशेष वातावरण से परे विराट विश्व का कोई ज्ञान नहीं होगा। घने बादलों के ओट में से सम्भव है, अपने जीवन काल में एक-आध बार उन्हें सूर्य की हलकी-सी झलक मिल जाती हो। परन्तु आगे, अन्य ग्रहों अथवा तारों भरी कनात का इन्हें कोई विवेक नहीं होगा। यदि वहां के वैज्ञानिक अधिक साहसी हुए तो उनका यह साहस एवं अन्वेषण अपने वातावरण या पहाड़ों (जोकि ग्रह के उत्तरी भागों में फैले हुए हैं), अथवा सागरों और द्वीपों तक सीमित होगा। अन्तरिक्ष में जीवन धारण के विचार से यह गम्भीर समस्या है और यदि शुक्र ग्रह पर जीवन के लक्षण प्राप्त हो जाते हैं, तो यह मानो ब्रह्माण्ड में जीवन के अस्तित्व तथा इसकी सर्वव्यापकता की घोषणा होगी।

परन्तु भू-लोक की जीवन धारणा एवं वातावरण को दृष्टि में रखते हुए तुलनात्मक अध्ययन किया जाय, तो इस प्रकाश में अधिकांश वैज्ञानिकों की मान्यता यही है कि शुक्र पर भी जीवन का पाया जाना सन्देहयुक्त ही है।

**जीवन के लिए मंगल पर परिस्थितियां कठिन हैं, लेकिन···**

जहां तक मंगल का प्रश्न है, सौरमण्डल में जीवन धारण के दृष्टिकोण से यह अधिक चर्चा का विषय रहा है। एक रूसी खगोलवेत्ता की खोज के अनुसार जीवन के लिए मंगल पर परिस्थितियां बहुत कठिन हैं, क्योंकि इसका वातावरण बहुत सूक्ष्म और झीना है, जैसा हमारी पृथ्वी से २५-३० किमी. ऊपर पाया जाता है। आक्सीजन की मौजूदगी सन्देहजनक है, जबकि कार्बन-डाईआक्साइड की मात्रा पृथ्वी की तुलना में दुगनी है। दूरदर्शी मंगल का रंग लालिमा लिये हुए लौहित वर्ण दिखाता है, जिसका सम्भावित कारण यह है कि ग्रह के धूलकणों में लोहे की मात्रा अधिक है, जिसने मंगल की सारी आक्सीजन और वातावरण की आर्द्रता को सोखकर भूमि को लौहवर्ण एवं शुष्क और नीरस बना दिया है। फलस्वरूप कार्बन-डाइआक्साइड की प्रचुरता है।

मंगल के ध्रुव बर्फ से ढके रहते हैं परन्तु बर्फ की तह अधिक मोटी नहीं होती। वर्ष के कुछ भागों में इन ध्रुवों की बर्फपोश चोटियों के किनारे और भूमध्य रेखा की ओर भूरे-नीले विस्तृत क्षेत्र नजर आते हैं। नक्षत्रविद इन्हें वानस्पतिक क्षेत्र कहते हैं, क्योंकि आक्सीजन के अभाव में भी कुछ वनस्पतियां ऐसी होती हैं जो जी लेती हैं। काई ऐसी ही वनस्पति है, जो शुष्क


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंजर अथवा असीमित शीत में भी जीवित रह सकती है। मंगल पर ऐसी ही वनस्पति की विपुलता हो सकती है। पृथ्वी पर भी रेगिस्तानों और नितान्त नीरस पर्वती क्षेत्रों में कुछ न कुछ वनस्पति और जीव-जन्तु पाये जाते हैं। इसी प्रकार बैक्टीरिया की कुछ किस्में अतिशीत में भी जीवित पायी गयी हैं। ऐसे जन्तु एवं पौधों की सम्भावना मंगल में की जा सकती है।

मंगल के जो चित्र लिये गये हैं उनसे ज्ञात होता है कि ग्रह का ध्रुवी चक्र पृथ्वी-जैसा है, इसलिए वहां की ऋतुएं भी वही हैं जो हमारी पृथ्वी पर होती हैं।

**एक मत यह भी है कि मंगल पर जीवन रहा हो**

नवीनतम खोजों से जो तथ्य सामने आये हैं वे आश्चर्यजनक तो हैं ही, कतिपय ऐसे भी हैं जो अब तक के अन्वेषणों के विरुद्ध भी हैं। इन चित्रों में मंगल की सतह भी चन्द्रमा की तरह ही ज्वालामुखी से भरपूर दिखायी भी पड़ती है। इस प्रकार यहां जीवन-धारण के विचार को बहुत धक्का लगा, और एक जमाने से जिन काल्पनिक नहरों के आधार पर तरह-तरह के अफसाने विज्ञान साहित्य में राह पा चुके थे, उनका खण्डन हो गया।

मैरिनर ने मंगल पर मीथेन और अमोनिया दो ऐसी गैसों का पता दिया है, जो पृथ्वी पर जीव-विकास की एक कड़ी है। इसी आधार पर मंगल में जीवन की सम्भावना के विषय में विभिन्न विचार व्यक्त किये जा रहे हैं। अतः कुछ वैज्ञानिकों का खयाल है कि मंगल पर जीवन यदि होगा, तो वह प्रारम्भिक रूप में होगा। एक रूसी वैज्ञानिक के अनुसार मंगल के वातावरण में भाप मौजूद है जो सघन होकर तरल भी बन सकती है तथा इससे ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है जो आक्सीजन की अनुपलब्धि में सादा जिस्म रखने वाले प्राणियों को जीवित रख सके। एक दूसरे नक्षत्रवेत्ता भी मंगल में जीवन-सम्भावना के हामी हैं। इनका यह विचार है कि यहां उन्नत वनस्पति जीवन भी विद्यमान हैं।

डा. एच.एस. जोन्स के अनुसार यद्यपि मंगल पर जीवन के कुछ लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं परन्तु अनुमान यह है कि हम एक ऐसे विश्व पर दृष्टि डाल रहे हैं जो सूखे और ठिठुरे हुए प्राणियों का निवास स्थान है। कदाचित लाखों वर्ष पूर्व वहां जिन्दगी की चहल-पहल रही हो, लेकिन क्रमशः शुष्क होते हुए वातावरण के प्रभाव से अब यह सर्वथा शुष्क हो चुका है। ऐसी ही सम्भावना एलेन ई. नूसे भी स्वीकार करते हैं कि अब से लाखों साल पहले मंगल और उसका वातावरण प्रगतिशील जीवन और सभ्यता के लिए अनुकूल था। लेकिन भौतिक परिस्थितियां शनैः-शनैः इतनी अनुदार हुईं कि ग्रह शुष्क होकर मौत की तारीकी में चला गया और वहां का चेतनायुक्त जीवन सैयारे से भाग निकलने की राह न पाकर शुष्क और विध्वंस हो गया। यह भी सम्भव है कि ऐसे समय में वे अनुकूल वातावरण की खोज में पृथ्वी पर और सूर्य व्यूह के अन्य ग्रहों पर गये हों। यदि मंगल की काल्पनिक नहरें कृत्रिम हैं तो ग्रह-निवासियों से सफल अन्तरिक्ष यात्रा की अपेक्षा की जा सकती है। परन्तु उस निर्दिष्ट समय में परिस्थितियां जीवन के अनुकूल न रही हों, और पराजित होकर वह अपने ही ग्रह पर वापस चले गये हों।

डा. ए. एम. लू का कहना है कि मंगल के निवासी काफी उन्नतिशील हैं, परन्तु वे सूक्ष्म आकृतियों में हैं। इसी प्रकार प्रो. एफ. ए. मोलटन का विचार है कि मंगल में यदि जीवन मौजूद है तो फिर वहां भौतिक कृतियां पृथ्वी के प्राणियों से सर्वथा भिन्न होंगी, क्योंकि वे वहीं के विशिष्ट वातावरण के वशीभूत होंगी।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसमान में कभी कभी उड़न तश्तरियां उड़ती हुई देखी जाती हैं। उनके विषय में गम्भीरता से इस सम्भावना पर विचार किया जा रहा है कि ये मंगल अथवा अन्य ग्रह के निवासी हैं जो इन अति उन्नतिशील राकेटों पर सफर करते हैं तथा पृथ्वी वृत्तान्त अथवा प्रकृति या 'मानव' के सृष्टि-कार्य की खोज करते हैं।

प्रो. तीखूफ का विचार है कि मंगल पर जो वनस्पति जीवन नजर आता है, तथा हमारी पृथ्वी पर अति प्रतिकूल मौसमी परिस्थितियों में जो पौधे उगे हैं उनमें समानता मौजूद है। प्रकाश और आक्सीजन के विना भी छोटे जीवकोष तथा पौधे जीवित रह सकते हैं और मंगल पर इन्हीं की सम्भावना हो सकती है।

इस प्रकार नक्षत्रविदों का सामान्य विचार यही है कि पृथ्वी से ऊपर उठकर जाने पर—किन्हीं विशिष्ट परिस्थितियों में ही सही—मंगल और शुक्र में जीवन धारण के लक्षण दिखाई देंगे, परन्तु वह उन आकृतियों में नहीं होंगे जैसे हमारी पृथ्वी पर पाये जाते हैं। जीव-अध्ययन से वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि सौरमण्डल में जीवन का वृत्त सूर्य से १० करोड़ किमी से २२ करोड़ किमी के मध्य में हो सकता है। इस तरह 'पृथ्वी' इस सौर-वातावरण के बीच में है और इसीलिए पूरे सौरव्यूह में जीवनधारण की दृष्टि से विशिष्ट स्थान रखती है। मंगल और शुक्र भी यद्यपि इसी वृत्त में आते हैं परन्तु कमी-बेशी के साथ सर्वथा भिन्न स्थिति में। तो भी इस सौर-वातावरण के प्रभाव से इन दोनों ग्रहों में भी किसी प्रकार के जीवन एवं वनस्पति का अभाव है।

किसी ग्रह पर जीवन का अस्तित्व यदि चिह्नित एवं प्रमाणित हो जाता है तो अंतरिक्ष की अथाह गहराइयों में अन्य ग्रहों पर जीवन-धारण का विगत सिद्धान्त सर्वथा वदल जायेगा। यह सिद्ध हो जाने का अर्थ यह स्वीकार करना होगा कि हमारे सौर-मण्डल अथवा अन्य नक्षत्र-व्यूहों में तुच्छ अथवा उच्च और सचेष्ट एवं प्रतिष्ठित जीवन वर्तमान है।

---

## ३३०० मीटर ऊँची इमारतें

अमेरिका की ८० मंजिली एम्पायर स्टेट बिल्डिंग (लगभग ४५० मीटर ऊंची) वर्षों तक दुनिया की सबसे ऊंची इमारत होने का गौरव प्राप्त किये रही। विगत वर्ष वहां ११० मंजिली दो इमारतें बन गयी हैं और वह गौरव अब इनका हो गया है। इमारतों की ऊंचाई की दिशा में यह प्रगति जारी रहेगी और अनुमान है कि २०–२५ वर्ष में ही ३३०० मीटर (लगभग दो मील) ऊंची इमारतें बनने लगेंगी! इन इमारतों में ५०० मंजिलें जमीन के ऊपर और ५० मंजिलें जमीन के अन्दर होंगी! एक-एक इमारत में दो-ढाई लाख की आबादी होगी। याने हरेक इमारत एक पूरा शहर ही होगा—समस्त सुविधाओं सहित!


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आधुनिक चिकित्सा पद्धति उद्भव और विकास

शशिभूषण पाठक

आधुनिक चिकित्सा पद्धति एलोपैथी की उत्पत्ति और विकास में आयुर्वेद का बड़ा योग रहा है। प्राचीनकाल में आयुर्वेद का प्रसार मिस्र तक हो चुका था। ईसा से लगभग ४००० वर्ष पूर्व मिस्र में सभ्यता का विकास हो चुका था। प्राचीन भारतीय व मिस्री सभ्यता और संस्कृति में बहुत साम्य मिलता है। प्राचीन मिस्रवासियों का भी पुनर्जन्म में विश्वास था, जिसके संकेत प्राप्त होते हैं। पिरामिडों में 'ममी' रखकर वे शव को सुरक्षित रखते थे। उन्हें यह विश्वास था कि आत्मा अमर है और कभी न कभी उस शरीर में अवश्य लौट आयेगी।

इससे यह तो स्पष्ट होता है कि प्राचीन मिस्र के चिकित्सकों ने ऐसी ओषधि खोज ली थी जिसकी सहायता से वे मृत शरीर को सैकड़ों वर्षों तक सुरक्षित रख सकते थे। पिरामिडों में रखे हुए शव आज भी सुरक्षित मिलते हैं।

**आक्रमणकारियों ने पुस्तकालय नष्ट कर दिये**

मिस्री चिकित्सा-विज्ञान की पुस्तकें सिकन्दरिया के पुस्तकालयों में रखी हुई थीं। परन्तु आक्रमणकारियों द्वारा वे पुस्तकालय नष्ट कर दिये गये। वर्तमान में प्राप्त सूत्रों से ज्ञात होता है कि वे लोग रोगों को नष्ट करने के लिए झाड़-फूंक, तंत्र-मंत्र आदि का आश्रय लेते थे। साथ ही वे विरेचन के लिए अंडी का तेल, आंख के लिए पशुओं का पित्त तथा गंजापन मिटाने के लिए शेर, वत्तख, सर्प, दरियाई घोड़ा तथा मगर आदि की चरबी का उपयोग करते थे।

वैदिक काल से सातवीं शताब्दी तक भारत में आयुर्वेद का स्वर्ण युग रहा। उस दौरान आयुर्वेद ने अत्यधिक उन्नति की। तत्पश्चात गुप्त काल में भारत पर यूनानी आक्रमण होने के फलस्वरूप आयुर्वेद विद्या यूनान में पहुंच गयी। वही यूनानी चिकित्सा-पद्धति आज भी उसी रूप में प्रचलित है।

**हिपोक्रेट्स युगीन तथ्य : आज की स्वीकारोक्ति**

एलोपैथी के उद्भव का श्रेय महान चिकित्सक हिपोक्रेट्स को दिया जाता है। हिपोक्रेट्स का जन्म यूनान में ईसा से ५०० वर्ष पूर्व हुआ था। कैंसर की खोज उसी ने की थी और 'कैंसर' शब्द का प्रयोग भी सर्वप्रथम उसने किया था। उसने यह भी सिद्ध किया था कि कैंसर मनुष्यों को ही नहीं, पशुओं को भी होता है। कैंसर की कोशाएं जब बढ़ती हैं तब अंत तक बढ़ती ही जाती हैं। शरीर में इनका विकास हर समय होता रहता है। हिपोक्रेट्स के इन तथ्यों को आज के वैज्ञानिक ज्यों का त्यों स्वीकार करते हैं। कैंसर की चिकित्सा में इनका विशेष महत्त्व है। इसके



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

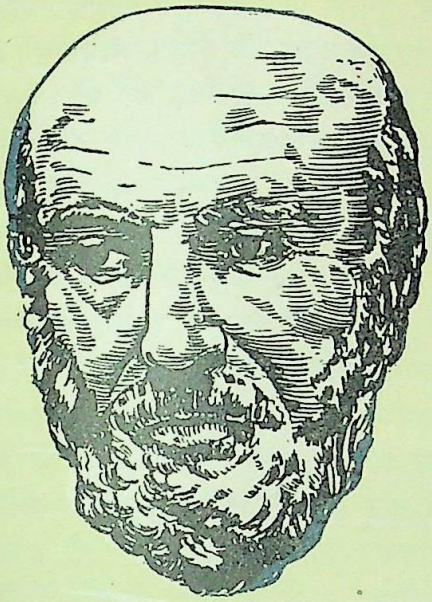

महान चिकित्सक हिपोक्रेटस जिसने कैंसर की खोज की

अतिरिक्त हिपोक्रेटस ने क्षय रोग, प्रसूति ज्वर, मिरगी आदि के विषय में भी अनुसंधान करके अनेक उपयोगी तथ्य प्रस्तुत किये। उसके मतानुसार शरीर में भोजन, जल व वायु की असन्तुलित मात्रा ही समस्त रोगों का कारण है।

दूसरा महान चिकित्सक था इटली का गेलन। लगभग १४०० वर्ष तक उसकी चिकित्सा पद्धति का व्यापक प्रचलन रहा। चिकित्सा की शिक्षा प्रधानतः गेलन के ही ग्रन्थों से दी जाती थी। उसकी बातों को ब्रह्म-वाक्य के रूप में स्वीकार किया जाता था। उन दिनों शल्य-चिकित्सा का तरीका बड़ा विचित्र था। एक चिकित्सक गेलन की पुस्तक को लेकर पढ़ता जाता था और उससे कुछ दूरी पर एक हज्जाम या नौकर किसी शव की चीरफाड़ करता था। अध्यापक एक छड़ी के संकेत से गेलन की पुस्तक के आधार पर संकेत देता था। सूअर के शरीर की चीरफाड़ करके शल्य-चिकित्सा सिखायी जाती थी।

शल्य-चिकित्सकों को चीरफाड़ के लिए केवल मृत्यु दंडित अपराधियों के ही शव मिलते थे। वे भी बाद में विधिवत दफना दिये जाते थे। ईसाइयों का प्रभुत्व होने के कारण रोग को पाप का प्रायश्चित माना जाता था। अधिक धर्मान्धि होने के करण लोगों ने शल्य-चिकित्सा को प्रोत्साहित नहीं किया। तत्पश्चात सर्वथा नयी चिकित्सा-पद्धति होमियोपैथी का जन्म हुआ। डा० हेनिमैन ने इसकी नींव डाली। हेनिमैन का कथन था कि अधिक दवाओं के उपयोग से रोगी अधिक पीड़ित होते हैं, अतः दवाओं का उपयोग कम से कम किया जाये।

**एक रुके हुए क्रम का आरम्भ**

शरीर-रचना के अध्ययन का रुका हुआ क्रम १४५२ में पुनः आरम्भ हुआ और नये रूप में हुआ। लियोनार्दो-द-विंशी नामक एक वैज्ञानिक और चित्रकार ने एक अपराधी का शव चुराकर स्वयं उसकी चीरफाड़ करके अनेक चित्र (चार्ट) बनाये। उन चित्रों की सहायता से लम्बे अरसे तक छात्रों को शरीर-

गेलन की चिकित्सा पद्धति का व्यापक प्रचलन १४०० वर्ष तक रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

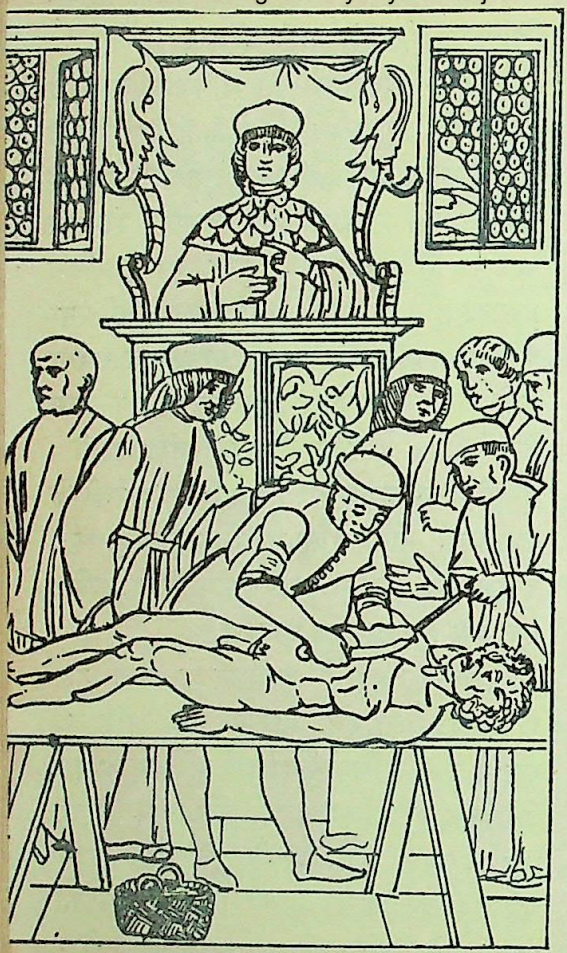

एक चिकित्सक गेलन की पुस्तक पढ़ता जाता था और कुछ दूरी पर एक हज्जाम किसी शव की चीरफाड़ करता था, अध्यापक छड़ी के संकेत से बताता जाता था

रचना की शिक्षा दी जाती रही। तत्पश्चात मध्य युग में शव के चीरफाड़ से प्रतिबंध हटा लिया गया परन्तु धर्मगुरु के सम्मुख ही शल्य-क्रिया की शिक्षा दी जाने लगी। पोप के मतानुसार मस्तिष्क में आत्मा का निवास रहता है। अतः मस्तिष्क की चीरफाड़ पर प्रतिबंध माना जाता था। फलतः बहुत समय तक शल्य चिकित्सक मस्तिष्क के अन्दर का ज्ञान नहीं प्राप्त कर सके।

सन १५३७ में आंद्रिया वजेंलियस ने शरीर रचना के विषय में अनेक क्रान्तिकारी तथ्य प्रस्तुत किये। वह भी मुर्देचुरा-चुराकर घर पर चीरफाड़ करके शरीर-रचना का ज्ञान प्राप्त करता था। १५४३ में उसकी लिखी हुई एक पुस्तक प्रकाशित हुई जिससे चिकित्सा जगत में हलचल मच गयी। उसमें उसने गेलन की सारी बातें गलत सिद्ध की थीं। गेलन के अनुयायियों ने वजेंलियस का कड़ा विरोध किया परन्तु अन्त में सत्य पर आधारित उसकी सारी बातें स्वीकार करनी पड़ीं।

सन् १८०० तक अस्पतालों का प्रचलन हो चुका था। पेरिस में 'होटेल ड्यू' नामक एक बहुत बड़ा अस्पताल था, जिसमें १२०० पलंग थे। परन्तु उस समय के अस्पतालों की अवस्था बेहद खराब थी। अधिकांश लोगों की मृत्यु होने के कारण उन अस्पतालों को 'मौतघर' की संज्ञा दी जाती थी। स्त्रियों के लिए उनमें अलग से 'प्रसूतिगृह' बनाये गये थे। परन्तु अधिकांश स्त्रियां प्रसव के बाद प्रसूति ज्वर के कारण मृत्यु का शिकार हो जाती थीं। उसका कारण चिकित्सकों की समझ में नहीं आ पाता था।

**प्रसूति ज्वर से मोर्चा**

सन् १८१८ में हंगरी के डा. हमनाज सेमेल ने प्रसूति ज्वर से मोर्चा लेने का बीड़ा उठाया। उसने ज्ञात कर लिया कि प्रसव के समय गन्दे औजारों से नाल काटने पर स्त्रियां प्रसूति ज्वर की शिकार हो जाती हैं। कुछ समय तक किसी ने इसे स्वीकार नहीं किया और इस तथ्य को सत्य प्रमाणित करने के निष्फल प्रयासों के बीच बेचारा सेमेल आखिर पागल होकर मर गया।

उसके बाद लिस्टर आया। लिस्टर ने १८४९ में हैजे पर अपनी खोज आरम्भ की। वह उसका कारण जानना चाहता था। साथ ही वह यह देखकर भी परेशान होता था कि आपरेशन के समय विषक्रमण क्यों हो जाता है और प्रायः फोड़ा पक क्यों जाता है। उस समय तक जीवाणुओं की खोज नहीं हो



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पायी थी। परन्तु लिस्टर ने शीघ्र ही ज्ञात कर लिया कि दूषित वायु व जल के सम्पर्क से ये दोष उत्पन्न हो जाते हैं।

लिस्टर के इस निष्कर्ष को लूई पाश्चर ने सिद्ध कर दिखाया। पाश्चर ने वायु में व्याप्त अदृश्य जीवाणुओं को खोज लिया। उस खोज से चिकित्सा-विज्ञान में एक नये युग का सूत्रपात हुआ। जीवाणुओं का ज्ञान हो जाने के बाद प्रत्येक रोग का ज्ञान भी सरलता से प्राप्त होने लगा।

पाश्चर ने एक ऐसी ओषधि खोज निकाली जिसके प्रयोग से कुत्ते के काटे रोगी को बचाया जा सकता था। पाश्चर ने देखा कि पागल कुत्ते के काटने पर उसके जीवाणु तीव्र गति से मनुष्य के मस्तिष्क पर प्रभाव डालते हैं। पाश्चर ने कुत्ते की लार से रोग के जीवाणु एकत्र करके विभिन्न पशुओं पर परीक्षण

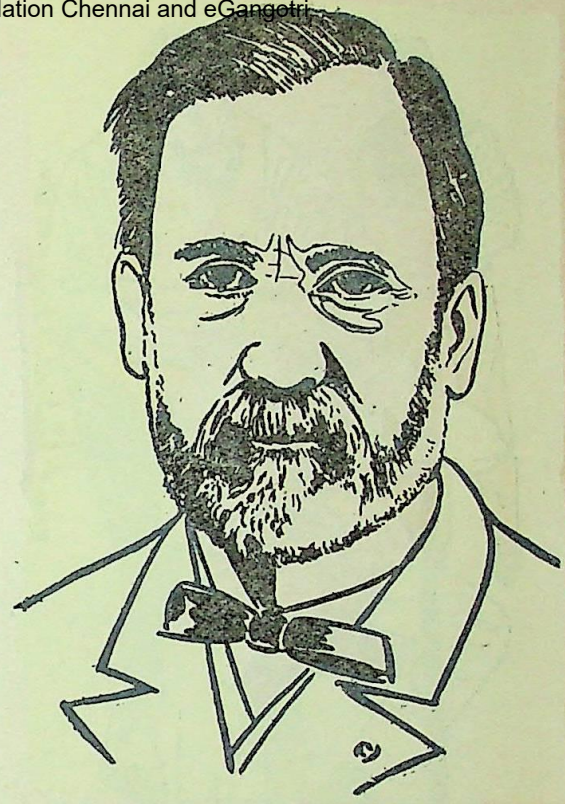

लूई पाश्चर जिसने अनेक प्रकार के अदृश्य जीवाणुओं की खोज की

रोग-विसंक्रामकों का जनक : लिस्टर

किये। खरगोशों पर उसका कोई हानिकर प्रभाव नहीं हुआ। तब पाश्चर ने खरगोश का मस्तिष्क सुखाकर अद्भुत ओषधि बनायी जिसके प्रयोग से कुत्ते के काटे मनुष्य को ठीक किया जा सकता था।

पाश्चर की उस ओषधि से विश्व में तहलका मच गया।

**अनेक प्रकार के जीवाणुओं की खोज**

लुई पाश्चर ने अनेक प्रकार के जीवाणुओं की जो खोज की उसी के आधार पर वैज्ञानिकों ने प्रत्येक रोग की उत्पत्ति का कारण भी जीवाणु मान लिया। पाश्चर ने बताया कि जीवाणु विशेष जलवायु और ताप पर तीव्र गति से फैलते हैं। उसने यह भी कहा, यदि जीवाणु न होते तो सृष्टि का क्रम ही रुक जाता क्योंकि जीवाणुओं के बिना कोई वस्तु नष्ट नहीं हो सकती है। उसने रोटी पर फफूंदी



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

**बेहोशी की दवा के आविष्कार से पहले फोड़े में नस्तर लगवाना भी कितना कष्टप्रद होता था !**

लगाने वाले जीवाणुओं की भी खोज की।

उन्हीं दिनों फ्रान्स में रेशम के कीड़ों में कोई बीमारी फैल गयी जिसके कारण रेशम का व्यवसाय ही नष्ट होने लगा। अधिकारियों ने पाश्चर से निवेदन किया कि वह इसका कुछ उपाय खोज निकाले। पाश्चर ने खोज प्रारम्भ कर दी और शीघ्र ही उन कीड़ों में रोग फैलाने वाले जीवाणुओं का पता लगा लिया और कीड़ों को रोगमुक्त कर दिया।

आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान को सूक्ष्म-दर्शी (माइक्रोस्कोप) का आविष्कार सबसे बड़ी देन है। सूक्ष्मदर्शी का आविष्कार ल्युवेन हाक ने किया था।

## बेहोशी की ओषधियों की खोज

इसी प्रकार बेहोशी की दवा का आविष्कार भी चिकित्सा-विज्ञान के लिए बड़ा महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ। उसी से शल्य चिकित्सा में उन्नति संभव हुई। इस आविष्कार से पूर्व आपरेशन करते समय रोगी को रस्सों से कसकर बांध दिया जाता था। रोगी बिलकुल हिलडुल नहीं सकता था और उसे असह्य पीड़ा होती थी। अनेक बार उस स्थिति में पीड़ा के कारण रोगी की मृत्यु भी हो जाती थी।

रोगियों की उस दुर्दशा को देखते हुए वैज्ञानिकों ने बेहोशी की ओषधियां खोजना शुरू किया। इस प्रयत्न में उन्होंने अनेक गैसों के प्रयोग किये। १८१५ में माइकल फैराडे ने ईथर का उपयोग किया जिसमें उसे कुछ सफलता तो मिली परन्तु उपयुक्त ओषधि फिर भी नहीं मिल पायी। कुछ समय तक नाइट्रोजन पर-आक्साइड (हंसाने वाली) गैस का उपयोग किया जाता रहा। सिम्पसन ने उस क्रम को आगे बढ़ाया। आखिर क्लोरो-फार्म के आविष्कार से समस्या हल हुई।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जर्मन वैज्ञानिक राबर्ट काक ने अनेक उपयोगी आविष्कार किये। उनमें मुख्य हैं पशुओं का प्रचलित रोग ऐन्थेरेक्स और हैजा।

दूसरे प्रबल मानव-संहारक रोग मलेरिया पर नयी खोज करने का श्रेय है रोनाल्ड रॉस को। रॉस ने पता लगाया कि मलेरिया 'एनोफि-लिस' जाति के मादा-मच्छरों द्वारा फैलता है।

रोगों में पीत-ज्वर पर की गयी खोज भी महत्त्व रखती है। इस खोज में अनेक वैज्ञानिकों को अपने जीवन की आहुति देनी पड़ी थी। लाजियर ने अपने कई मित्रों के साथ इस विकट ज्वर के जीवाणुओं की खोज की थी।

## कैंसर चिन्तनीय रूप में फैल रहा है

आरम्भ में कहा जा चुका है कि हिपो-क्रेट्स ने कैंसर के विषय में अनेक तथ्य प्रस्तुत


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किये थे परन्तु कैंसर के रोगी बहुत कम होने के कारण उस समय चिकित्सकों ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया। वर्तमान शताब्दी में कैंसर चिन्तनीय रूप से फैल रहा है। इस पर विश्व के सभी देशों में अनुसंधान किये जा रहे हैं। वैज्ञानिकों ने कैंसर की उत्पत्ति का कारण तम्बाकू बताया है। हारवर्ड विश्वविद्यालय के स्वास्थ्य विशेषज्ञों ने तम्बाकू के २४ विषैले तत्त्व खोज लिये हैं। तम्बाकू में पाये जाने वाले पोलोनियम और निकोटिन के कारण कैंसर की उत्पत्ति होती है। लेकिन अभी तक वैज्ञानिक कैंसर नष्ट करने की ओषधि नहीं खोज पाये हैं। कैंसर की चिकित्सा के लिए आयुर्वेद की भी सहायता ली जा रही है। इस विषय में लाजवन्ती तथा तुलसी के पौधों पर अनुसंधान किये जा रहे हैं।

इस युग का सबसे बड़ा मानव संहारक रोग हृदय रोग है। यद्यपि काफी सीमा तक इस रोग पर नियंत्रण पाया जा रहा है परन्तु इसे पूरी तरह मिटाना संभव नहीं हो पा रहा है। प्रगतिशील देशों में हृदय-प्रतिरोपण के अनेक सफल प्रयोग भी किये गये हैं।

अनुमान है कि प्रति एक लाख व्यक्तियों में ४५० व्यक्ति इसी रोग से मर जाते हैं और स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को ४०-४५ वर्ष की आयु में यह रोग अधिक होता है। इसका आक्रमण आकस्मिक ही होता है।

**आधुनिक चिकित्सा विज्ञान उन्नति के पथ पर अग्रसर है**

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान तीव्र गति से उन्नति कर रहा है। चांद पर मानव के पहुंचने से चिकित्सा क्षेत्र में भी नये युग का सूत्रपात हुआ है। अनेक अदृश्य, हानिकारक जीवाणुओं से सुरक्षा के उपाय खोजे जा रहे हैं। हर नयी सुबह अनेक नयी खोजें लेकर आती है। इस क्षेत्र का भविष्य निश्चय ही उज्ज्वल है।

---

## ग्राहकों से निवेदन

विज्ञान-लोक में लेख भेजते समय कृपया निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें :

१. केवल अप्रकाशित, अप्रसारित तथा मौलिक लेख भेजें।

२. लेखक रोचक तथा सरस हो। लेख की शब्द संख्या लगभग २,५०० शब्द हो। साथ में चित्र-सन्दर्भ भी भेजें एवं स्रोत का उल्लेख अवश्य करें।

३. लेख हाशिया छोड़कर कागज के एक ही ओर लिखा गया हो। जहां तक सम्भव हो टाइप कराकर लेख भेजें।

४. लेख के साथ पता लिखा, टिकट लगा लिफाफा भेजना अनिवार्य है। केवल टिकट कदापि संलग्न न करें अन्यथा अस्वीकृत लेख वापस भेजना सम्भव न होगा।

५. लेख के निर्णय-सम्बन्धी पत्र-व्यवहार करने से पूर्व कम से कम एक माह तक प्रतीक्षा अवश्य करें।

**व्यवस्थापक—विज्ञानलोक, हास्पीटल रोड, आगरा**


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# पौधे भी धन-संचय करते हैं

सरला जैन

जीव-जन्तुओं और मनुष्यों में तो अपनी सन्तान से प्रेम होता ही है, लेकिन वनस्पतियों म भी अपनी सन्तान के प्रति प्रेम तथा भविष्य की चिन्ता कितनी होती है यह कदाचित सभी को ज्ञात नहीं। वे इस दिशा में मनुष्य और जीव-जन्तुओं से एक कदम आगे ही हैं। दूरदर्शिता पौधों में आश्चर्यजनक रूप से विकसित है। एक भी फूलने वाला पौधा ऐसा नहीं है जो अपने बच्चों के लिए बीज के रूप में पर्याप्त भोजन सामग्री संग्रहीत न कर लेता हो।

**लखपतियों की संतान पौधे**

मनुष्यों की तरह पौधों को भी प्राप्त होने वाले पैतृक धन में विषमता पायी जाती है। कई पौधे तो लखपतियों की संतान की तरह खूब धन कमाते हैं, जैसे नारियल का पौधा। जब तक पौधे की जड़ खोपरे की तीन आंखों में से एक को फोड़कर जमीन नहीं पकड़ लेती तब तक उसके खाने के लिए गिरी का सफेद, नरम पौष्टिक गूदा प्रस्तुत ही रहता है। सेम, मटर, बादाम, अखरोट आदि के पौधों को भी पैतृक सम्पत्ति मिलती है। दूसरी ओर राई, पोस्त या पीपल आदि बेचारे गरीब घराने में पैदा होते हैं। इन सबको अपने पिता



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

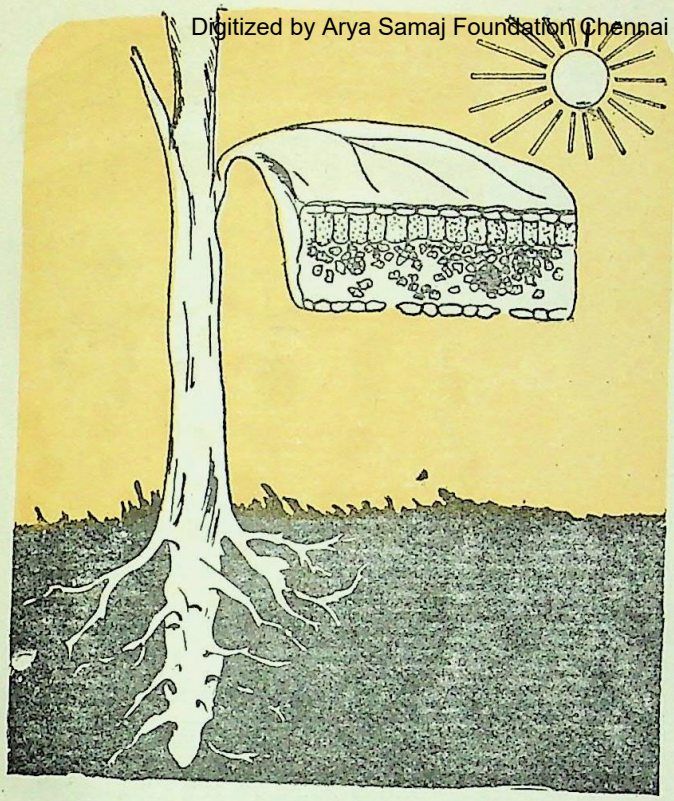

खनिजयुक्त जल पौधों में मूल-रोमों से होकर प्रवेश करता है। हरी पत्तियों में उससे पौधों के भोजन का निर्माण होता है। इस क्रिया के लिए सूर्य का प्रकाश आवश्यक है

हरी पत्ती एक फैक्टरी है जिसे सूर्य से ऊर्जा प्राप्त होती है। सूर्य के प्रकाश में प्रकाश-संश्लेषण (फोटोसिंथेसिस) क्रिया द्वारा पत्तियों में माड़ी (स्टार्च) उत्पन्न होती है



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से इतनी कम पैतृक सम्पत्ति मिलती है कि वह शीघ्र ही समाप्त हो जाती है। बीज से निकलते ही पत्तियों को हरितवर्णा हो जाना पड़ता है। यदि वे अल्पवयस्क पत्तियां हरी न हों और अन्य प्रौढ़ विकसित पत्तियों की भांति कड़ी मेहनत न करने लगें तो इनके पौधे मर जायेंगे और इन पौधों की जात ही लुप्त हो जायेगी। इन उदाहरणों को देखकर मानना पड़ता है कि वनस्पतियों में भी पैतृक सम्पत्ति के विषय में उतना ही वैषम्य है जितना कि मानवों में। निश्चय ही पैतृक धन से विहीन इन नन्हें पौधों की आश्चर्यजनक जीवनशक्ति प्रशंसा योग्य है। इन्हें बना-बनाया भोजन कोई नहीं दे जाता। भोजन के लिए वे बड़ी ईमानदारी से जीवन-संघर्ष आरम्भ से अन्त तक करते हैं।

पौधों की दुनिया में ऐसा कोई भी स्थल नहीं जहां राजनीतिक और सामाजिक नियम निर्धारित न हों। वे नियम ऐसे सच्चे हैं कि

**बीज की एक संचय कोशिका जिसमें भोजन संपत्ति के रूप में संचित रहता है (आवर्धित दृश्य)**

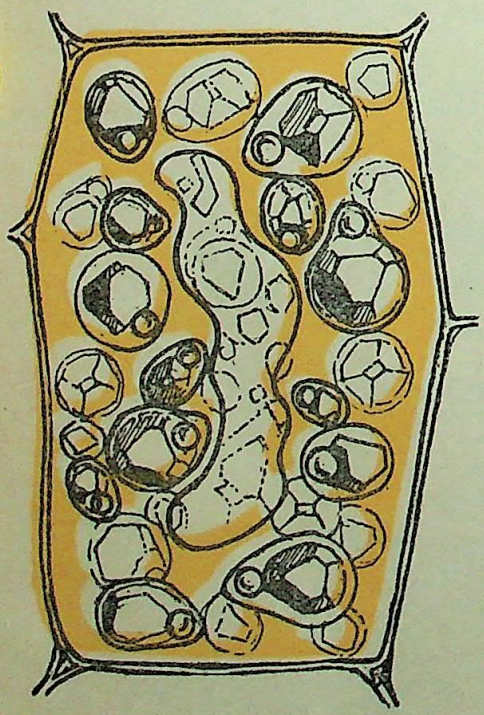

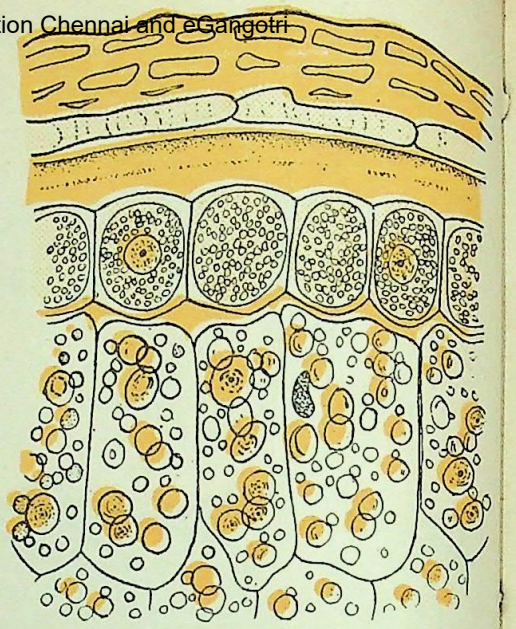

**गेहूं के दाने की आड़ी काट का बाह्य दृश्य (आवर्धित)**

हमें आश्चर्य में डाल देते हैं और उनसे कितने ही गुण हमें सीखने को मिलते हैं।

**पुरानी पत्तियों की मृत्यु से पूर्व नयी पत्तियों का जन्म**

वृक्षों की जिन आंखों से वसंत ऋतु में पत्तियां निकलती हैं वे किस प्रकार मोटे खोल से ढकी रहती हैं यह सभी जानते हैं। उन पत्तियों का निर्माण तात्कालिक नहीं होता। लोग समझते हैं कि पुरानी पत्तियों के गिरने पर नयी पत्तियां बनती हैं, परन्तु यह धारणा सच नहीं है। वास्तव में पुरानी पत्तियों के गिरने से पहले ही नयी पत्तियां जन्म ले चुकी होती हैं। पुरानी पत्तियां पूरी गर्मी भर केवल इसलिए टिकी रहती हैं कि उनकी उत्तराधिकारी नयी पत्तियां उनका स्थान लेने योग्य हो जायें। वे पुरानी पत्तियां अपनी कलियों में भरपूर पोषण एकत्र किये रखती हैं, ताकि उचित ऋतु आने पर नयी पत्तियां तैयार हो जायें। भविष्य के लिए दूरदर्शिता का यह कितना सुन्दर उदाहरण है।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

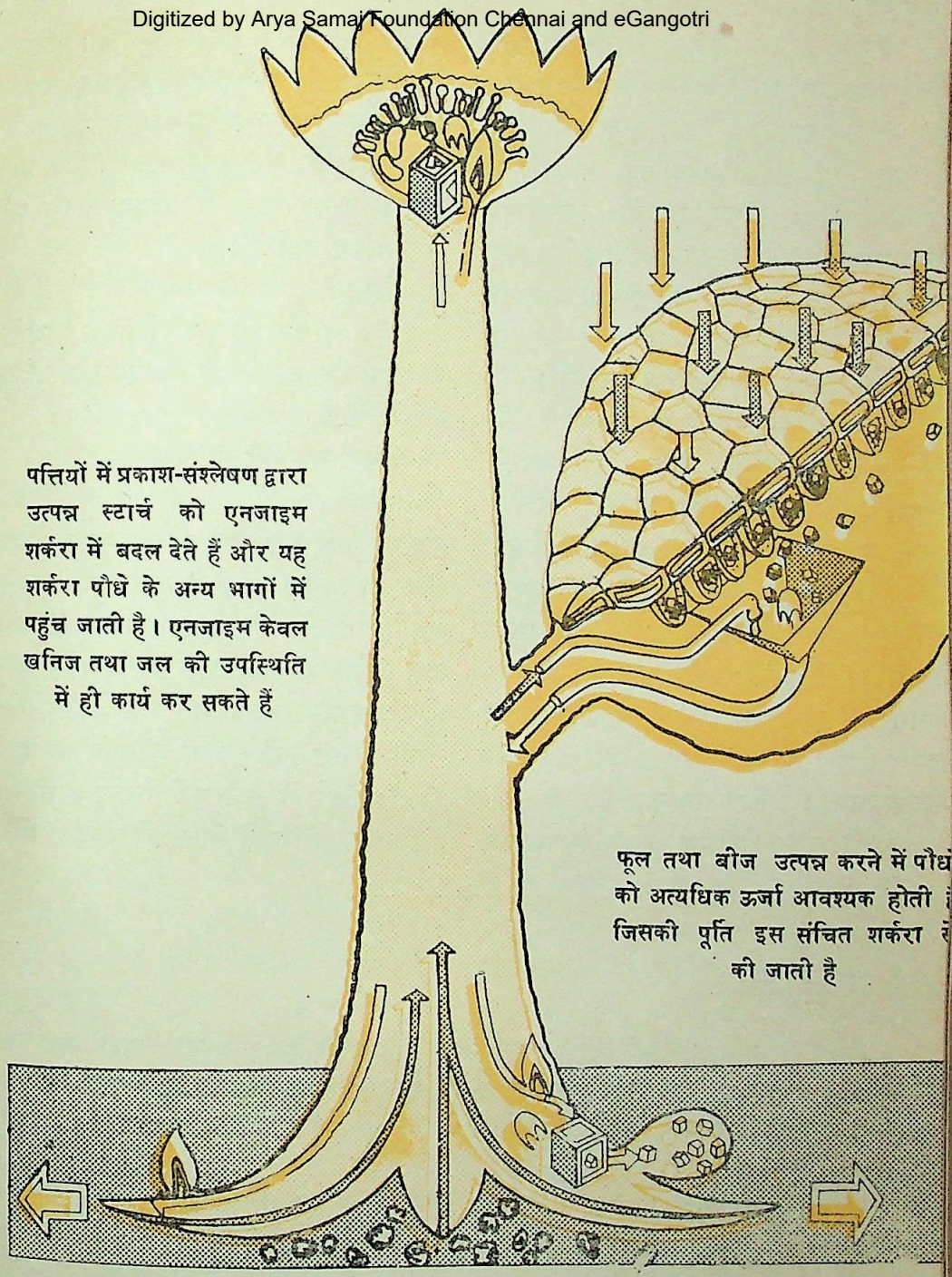


कुछ पौधे अपनी सम्पत्ति भूमि में गाड़े रखते हैं। उदाहरणार्थ आलू, शकरकंद, शलजम, गाजर, मूली आदि। इन पौधों का भूमिगत भाग जड़ों का नहीं, तनों का होता है और तने में 'आंखें' होती हैं। आंखें कुछ जमीन के ऊपर और कुछ जमीन के नीचे रहती हैं।

जमीन के नीचे वाली आंखों से नये पौधे उत्पन्न होते हैं। यदि आलू के छोटे-छोटे टुकड़े काटकर बो दिये जायें तो प्रत्येक टुकड़े से नये पौधे उत्पन्न होंगे बशर्ते कि उसकी आंखें न कटने पायें।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

**आलू की आंखें ही वास्तविक पौधे**

ये आंखें ही वे स्थल हैं जहां पौधे पैदा होते हैं, शेष आलू तो उसके लिए भोजन है, पोषण है। उसे खाकर नया पौधा ठीक इस तरह जीवित रहता है, जैसे प्राणियों में बालक अपनी मां का दूध पीकर। सुन्दर और उपयोगी पौधे प्रायः ही अपनी भोजन सम्पत्ति इसी प्रकार जमीन में छिपाये रहते हैं। वह सामग्री आगामी फसल के लिए सुरक्षित रहती है। अनुकूल ऋतु आने पर नयी पत्तियां उग आती हैं।

प्याज की एक पत्ती लीजिये और उसे पानी भरे बड़े मुंह की बोतल पर इस प्रकार रखिये जिससे पत्ती की जड़ तर रहे। बोतल को बराबर प्रकाश में रखे रहिये। आप देखेंगे कि पत्ती को पानी के सिवा कुछ नहीं चाहिए। कुछ समय बाद उस प्याज की पत्ती से क्रमशः हरी पत्तियां और फूल भी निकल आयेंगे। उनके इस विकास का आधार केवल प्रकाश है।

**अधिक माड़ी : अधिक सुन्दरता**

लिली तथा अन्यान्य सुन्दर फूलों को अधिक सुन्दर करने के लिए फलने-फूलने से पहले पौधे को ऊपर से काट लेते हैं। परिणाम यह होता है कि तना फूलकर मोटा हो जाता है और अधिकाधिक माड़ी जमा करता जाता है।

इस प्रकार माड़ी की मात्रा अधिक प्राप्त होने के कारण फूलों में अधिक चटक और सुन्दरता आ जाती है।

बहुत से पौधे गर्मियों में मर जाते हैं और वर्षा ऋतु में पुनः जी उठते हैं। उस पुनर्जीवन की क्रिया में वही माड़ी सहायक होती है जो पौधे में संचित रहती है।

**नये पौधे तैयार होने की क्रिया**

दूब जाति की वनस्पतियां अपनी वंश-वृद्धि के लिए इससे भी अधिक आश्चर्यजनक रीति का प्रयोग करती हैं। वे अपने तनों को जमीन पर फैलाती रहती हैं। इस क्रिया में उन्हें अधिक मेहनत नहीं करनी पड़ती और भोजन सामग्री भी विशेष जमा नहीं करनी पड़ती। केवल तनों के बीच की गांठें फूल जाती हैं और उनमें से नयी जड़ें निकल आती हैं। इस प्रकार नये पौधे तैयार हो जाते हैं।

---

## पानी में खेती-बाड़ी

पौधे अपने पोषण के लिए मिट्टी का बहुत ही कम अंश लेते हैं। अधिकांशतः पानी और कार्बन डाइआक्साइड से ही पौधों के भोजन की आवश्यकता की पूर्ति होती है। इस तथ्य के अनुसार अब बिना भूमि के ही—पानी में—पौधे उगाये जाने लगे हैं। पानी में की जाने वाली खेती की इस विधि को 'हाइड्रोपोनिक्स' कहते हैं।

इस विधि द्वारा पौधे जल के घोल में उगाये जाते हैं। पौधों के लिए आवश्यक खनिज तथा तत्त्व जल में उचित मात्रा में घोल दिये जाते हैं। फिर उस घोल को छिछले ट्रे जैसे बर्तनों में भर देते हैं और नवांकुरों को घोल में डाल देते हैं। डोरी आदि द्वारा ऐसा प्रबन्ध कर दिया जाता है जिससे पौधों की केवल जड़ें ही पानी में रहें, शेष पौधा पानी से ऊपर रहे।

खेती-बाड़ी का यह तरीका बहुत खर्चीला है और अमीर लोग ही इसे अपना सकते हैं। अमरीकी सैनिकों ने जापान के निकट प्रशान्त महासागरीय द्वीपों में पानी में खेती-बाड़ी करके शाक-सब्जियां उगायी हैं।

क्योंकि ये जलीय उद्यान बड़े-बड़े बन्द लता-भवनों में होते हैं, इसलिए बेमौसम के शाक-फल भी इनमें उगाये जा सकते हैं।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# प्रयोगों की दिशा में

निरंकार सिंह

तारे क्यों चमकते हैं? पानी क्यों बरसता है? कैसे छोटे से बल्ब से बटन दबाते ही कमरे में उजाला हो जाता है? मोटर कैसे चलती है? आदि प्रश्नों के चिन्तन में मैं छोटी आयु से ही व्यस्त रहा। विज्ञान की किताबें पढ़ता था तो यह जानने को बेचैन हो उठता था कि इतनी सुन्दर बात का इस व्यक्ति ने कैसे पता लगा लिया? मैं यह जानने का प्रयास शुरू से ही करता रहा हूं कि एक महान व्यक्ति क्या खाता है, क्या पहनता है, अपने साथ के लोगों से किस तरह से बातें करता है और उसके काम करने के तरीके क्या हैं? इन्हीं प्रश्नों के उत्तर की खोज के लिए मैंने बहुत से देशी-विदेशी वैज्ञानिकों के जीवन-परिचय पढ़े। तब इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि प्रत्येक वस्तु और प्रत्येक घटना के पीछे कुछ न कुछ रहस्य होता है और उस रहस्य की अनुभूति पर ही विज्ञान की सफलता निर्भर रहती है।

**प्रेरणा की एक किरण**

उस दिन नये-नये विचारों के बीच एक पत्रिका पढ़ रहा था। उस पत्रिका में भारत के महान वैज्ञानिक स्वर्गीय डा. मेघनाद साहा के अभूतपूर्व कार्यों का वर्णन था। ताराओं के गठन-विगठन की समस्या को हल करने वाले तापीय आयनीकरण के समीकरण में सभी खगोलविद और भौतिकविद उलझे हुए थे। उनमें विश्वप्रसिद्ध वैज्ञानिक नील्स ब्होर और आइन्स्टीन भी थे। भारत के लिए यह क्या कम गौरव की बात है कि उस समीकरण की खोज का श्रेय मेघनाद साहा को ही मिला?

एक दिन मैं प्रयोगशाला में अमरीका के भौतिकविद ल्यूमर के फोटोमीटर से प्रकाश-स्रोत की प्रदीपन शक्ति मापनेवाला प्रयोग कर रहा था। विभिन्न प्रकाश स्रोतों की ज्योति मापन के लिए उनकी तुलना मानक स्रोत से की जाती है। इसके लिए जो यन्त्र प्रयुक्त किये जाते हैं उन्हीं को फोटोमीटर कहते हैं। फोटोमीटर कई प्रकार के होते हैं। प्रयोग के दौरान मैंने देखा कि ल्यूमर के फोटोमीटर में कुछ कमियां हैं जिनके कारण प्रयोग ठीक नहीं बैठ पा रहा। यद्यपि साधारण फोटोमीटरों की अपेक्षा यह उत्तम माना गया है, तथापि इसका सबसे बड़ा दोष यह है कि इसके द्वारा प्रकाश-स्रोत की ज्योति का मापन एक अन्धेरे कमरे के भीतर ही सम्भव है। इसमें प्रयुक्त तकनीक ऐसी है कि प्रकाश के उत्तरोत्तर वर्तन के कारण प्रकाश की तीव्रता घट जाती है। फलतः बहुत अच्छा परिणाम प्राप्त नहीं होता। दूसरे यह भी कि इस फोटोमीटर का मूल्य लगभग सात सौ रुपया है। इसलिए हमारे यहां की छोटी संस्थाएं इसका लाभ नहीं ले पातीं।

**और मैंने फोटोमीटर का आविष्कार किया**

इस उधेड़बुन में मैं महीनों लगा रहा और जो चाहता था, वह मिल ही गया। साधारण फोटोमीटर में पर्दे के दोनों ओर दो प्रकाश-स्रोतों की व्यवस्था रहती है। उसके स्थान पर


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

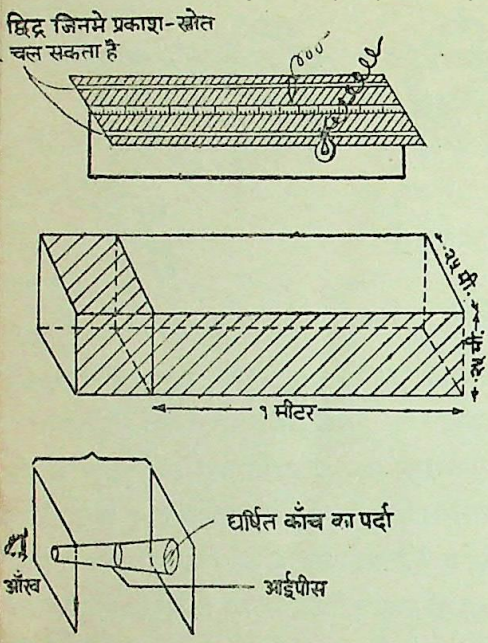


फोटोमीटर की प्रायोजना

मैंने पर्दे के एक ही ओर दोनों प्रकाश-स्रोतों की व्यवस्था सोच निकाली। दूसरे दिन मैं गुरुदेव डा. नन्दलाल सिंह के पास गया और अपने उस नये फोटोमीटर की प्रायोजना प्रस्तुत की। प्रयोगों के पश्चात उन्होंने मेरी प्रायोजना को सही घोषित किया।

उनके मार्गदर्शन में मैंने जो नया फोटोमीटर तैयार किया है, उसमें ये कमियां नहीं हैं। उसका मूल्य भी लगभग दो सौ रुपया होने के कारण किसी भी छोटी शिक्षण संस्था के लिए वह सुलभ है। इसकी तकनीक पुराने फोटोमीटरों से सर्वथा भिन्न है और इसके परिणाम भी उनसे उत्तम हैं।

**भूघूर्णनमापी बनाया**

दूसरा यन्त्र जो मैंने तैयार किया वह है भूघूर्णनमापी। यह यन्त्र पृथ्वी का घूर्णन और अक्षांश मापने में उपयोगी है। भूसर्वेक्षण की दृष्टि से इसकी उपयोगिता अधिक है। वास्तव में यह फोको-पेंडुलम का अति विकसित रूप है और उसी के सिद्धान्त पर आधारित है। यह तो स्पष्ट है कि पृथ्वी का बाह्य पर्त समतल नहीं है। इस पर बड़े-बड़े पर्वत और सागर हैं, कहीं ढेर-सा पदार्थ एक स्थान पर भरा पड़ा है, तो कहीं दूर-दूर तक खाली स्थान पड़े हैं। अतः विभिन्न स्थानों पर पृथ्वी का घूर्णन तथा अक्षांश मापकर हम पृथ्वी की ऊपरी सतह के विषय में बहुत कुछ नयी बातें जान सकते हैं। उनसे हमें खनिज पदार्थों की खोज में भी सहायता मिलेगी।

**मेरी तीसरी कृति**

मेरी तीसरी कृति सौर ऊर्जा से सम्बन्धित है। प्रगतिशील देशों में सौर ऊर्जा पर बड़ी तेजी से अनुसन्धान हो रहे हैं। उनमें भी सोवियत देश सबसे आगे हैं। पिछले वर्ष लूना-१७ के द्वारा जिस लूनाखोद को उसने चन्द्रधरा पर उतारा है, वह सौर ऊर्जा अर्थात सूर्य के प्रकाश से ही चलती है। सोवियत देश में सौर ऊर्जा से कार्य करने वाली अनेक योजनाएं कार्य कर रही हैं, जो सर्दियों में कैनटीनों, स्नानगृहों में गर्म पानी उपलब्ध कराती हैं तथा मकानों को भी गर्म रखती हैं। सौर ऊर्जा से विद्युतोत्पादन में भी वे सफल हुए हैं। अमरीकी

**भूघूर्णनमापी से खनिज पदार्थों की खोज में भी सहायता मिलेगी**

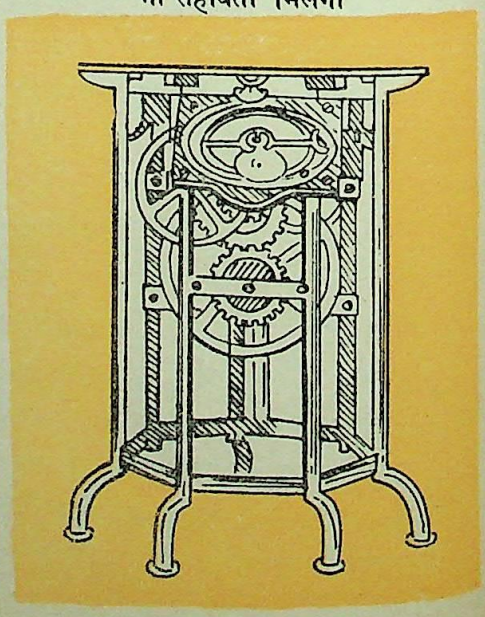


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

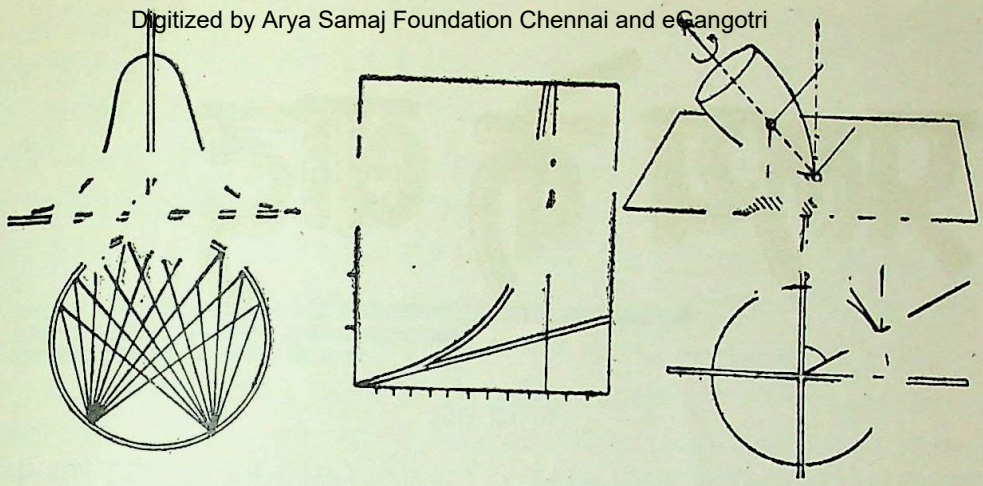

सौर ऊर्जा संग्राहक का सिद्धान्त

वैज्ञानिकों ने सूर्य के प्रकाश को विद्युत में बदलने के लिए सौर सेलों का निर्माण किया है। ये सेल विद्युत्-घड़ियों तथा छोटे ट्रांजिस्टरों के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। वहां तो इन्हीं सेलों से निर्मित बैटरियां टेलीफोन लाइनों म काम कर रही हैं। और अन्तरिक्षयानों तथा राकेटों के लिए तो ये वरदान ही सिद्ध हुई हैं।

कठिनाई यह है कि सूर्य का प्रकाश लगातार समान रूप से एक ही स्थान पर प्राप्त नहीं होता। उस प्रकाश की उपयोगिता तभी हो सकती है, जब हम सूर्यास्त के पश्चात भी इच्छानुसार उसका उपयोग कर सकें। इसके लिए दिन में ही सूर्य के प्रकाश का संग्रह करने की युक्तियां सोचना आवश्यक होगा। इसके लिए हाल ही में मैंने एक यंत्र तैयार किया है। उस यंत्र में पैराबोलिक दर्पणों तथा लेन्सों की सहायता से कुछ विशेष आकार के पात्रों में जल को गरम करके उसमें चक्रीय गति उत्पन्न की गयी है। पानी की इस चक्रीय गति का उपयोग छोटे-छोटे डायनेमो चलाने में किया ज सकता है। डायनेमो से प्राप्त होने वाली विद्युत को सीसा-संचायक (लेड-एक्यूमुलेटर) जैसे द्वितीय सेलों में एकत्र किया गया है ताकि हम अपनी सुविधानुसार जब चाहें तब उस विद्युत का उपयोग प्रकाश आदि के लिए कर सकें। इस यन्त्र का मूल्य व्यापारिक स्तर पर लगभग पांच सौ रुपया हो सकता है। एक बार यन्त्र को खरीदने के बाद उसका वार्षिक खर्च दस-बारह रुपये मात्र पड़ेगा क्योंकि ऊर्जा प्राप्ति का मुख्य स्रोत सूर्य का प्रकाश ही है जिसका कोई मोल-तोल नहीं है। इस दिशा में मेरे प्रयत्न जारी हैं और आशा है, यन्त्र शीघ्र ही बन जायेगा।

**आविष्कार संयोगवश ही नहीं होते**

यह प्रचलित धारणा निर्मूल है कि आविष्कार संयोगवश ही होते हैं। तथ्य यह है कि सच्चा आविष्कारक वही है जो ज्ञान की खोज में अनवरत लगा हुआ है और अपने चुने हुए क्षेत्र में किसी भी नयी बात का कम से कम एक नन्हा कण पा जाने पर नये उत्साह से कार्य करता है।

---



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# प्रलय के बाद

कैलाश साह

दिसम्बर १९६० की वह शाम उस छोटे-से पहाड़ी कस्बे के इतिहास में अद्वितीय थी। अभी दिन डूबा नहीं था। यकायक कस्बे के ठीक ऊपर के मोड़ पर कारों का एक काफिला दिखायी पड़ा। उस कस्बे में कारों के काफिले का आना कोई नयी बात नहीं थी। छोटा-सा कस्बा अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए सारे देश में प्रसिद्ध था। लेकिन कारों का यह काफिला इसलिए उस छोटे-से कस्बे के इतिहास में अद्वितीय था कि इसमें संयुक्त राष्ट्र संघ के विशेषज्ञों का एक दल शोध प्रयोगशाला के लिए जगह का चुनाव करने आ रहा था। अन्तरराष्ट्रीय भू-भौतिकी वर्ष में इस शहर के वातावरण तथा मौसम के विषय में आवश्यक सूचनाएं इकट्ठी कर ली गयी थीं। इस नगर की जलवायु विशेष शोध के लिए उपयुक्त पायी गयी।

कारों का वह काफिला आकर उस पहाड़ी कस्बे के चौराहे पर रुका। पांच कारों से आठ विशेषज्ञ उतरे और उन्होंने चर्च के ऊपर के टीले को प्रयोगशाला के निर्माण के लिए एकमत होकर चुना। इस टीले से वह सारा नगर दिखायी पड़ता है। यहां उस अन्तरराष्ट्रीय प्रयोगशाला की स्थापना होनी थी जिसमें होने वाले प्रयोग अगर सफल हो गये तो एक दिन मनुष्य अपने सौरमण्डल के बाहर यात्रा करेगा।

पहाड़ी पर लोगों का तांता लग गया। उस छोटे-से कस्बे की सारी आबादी कुल १२७५ थी जिसमें बच्चे और बूढ़े सभी शामिल थे।

तीन वर्ष तक दिन-रात काम के बाद वह प्रयोगशाला बनकर तैयार हुई। प्रयोगशाला के प्रमुख वैज्ञानिक शशिकान्त थे और उनके सहायक थे अमरीका के हम्फ्री न्यूमैन, सोवियत संघ के निकोलाई शेवेंकोवस्की, इंगलैण्ड के हैरी विलियम्स, संयुक्त अरब गणराज्य के अब्दुल शीरीं सुलेमान तथा इथोपिया के लुबुसेत।

प्रयोगशाला के अधिकांश उपकरण सोवियत संघ तथा अमरीका से आये थे और १९६३ की दिसम्बर की २ तारीख को प्रयोगशाला का सादे ढंग से उद्घाटन हुआ। भारतीय वैज्ञानिक शशिकान्त प्रसिद्ध रसायनशास्त्री थे और उनकी आयु मात्र ४० साल थी। निकोलाई शेवेंकोवस्की और न्यूमैन जीवशास्त्री थे, हैरी मनोवैज्ञानिक थे। अब्दुल शीरीं सुलेमान मानव शरीर रचना के विशेषज्ञ तथा कुशल सर्जन थे। इथोपिया के लुबुसेत का नाम सारे संसार में जड़ी-बूटियों के विशेषज्ञ के रूप में प्रसिद्ध था। वह वनस्पति विज्ञान के एकमात्र ऐसे विद्वान थे जो अपने विषय में अत्यधिक पारंगत होने के साथ-साथ वनस्पतियों के ओषधीय गुणों से भी पूर्ण रूप से परिचित थे।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२ दिसम्बर १९६५ की शाम को प्रयोग-शाला के मध्य कक्ष में ये सभी विश्वविख्यात वैज्ञानिक एकत्र हुए। हलके दूधिया प्रकाश में काली मेज़ों के चारों ओर सब बैठे थे और तभी शशिकान्त ने अपने सहयोगियों को प्रयोगशाला के महत्त्व के विषय में बतलाने के बाद कहा, "आप सब जानते हैं कि मनुष्य शीघ्र ही सौरमण्डल के निकटतम पड़ोसियों तक पहुंच जायेगा। लेकिन उसकी मंजिल यही नहीं है। उसे आकाशगंगा की खोज करनी है। तमाम वैज्ञानिक उपलब्धियों के पश्चात भी हम मनुष्य की आयु सीमा के अन्दर दूर दराज के उन ग्रहों तक जाने में असमर्थ हैं जहां सम्भवतः कोई और सभ्यता भी फूल-फल रही हो। इस समस्या का समाधान यह है कि आदमी को इन लम्बी यात्राओं पर भेजने के लिए उसकी आयु-सीमा को बढ़ाया जाय। अभी तक हमारे विज्ञान को बुढ़ापे जैसे सार्वभौम रोग पर विजय नहीं मिली है, इसीलिए निकट भविष्य में मनुष्य मृत्यु पर विजय नहीं पा सकेगा। हमारी इस प्रयोगशाला का उद्देश्य मृत्यु पर विजय प्राप्त करना नहीं है, लेकिन मनुष्य को इन लम्बी यात्राओं पर भेजने के लिए उसे सुषुप्त करना है, जिससे उसकी आयु-सीमा इन लम्बी यात्राओं के लिए बढ़ायी जा सके और लम्बी यात्राओं से मेरा तात्पर्य एक तरफ की यात्रा में कम से कम तीस वर्ष का समय लगना है। इसके साथ-साथ अन्तरिक्षयानों की वर्तमान गति में वृद्धि होना आवश्यक है। इतनी लम्बी यात्रा के बीच अगर आदमी अन्तरिक्षयान के अन्दर जागृत अवस्था में रहेगा तो वह आयु के बढ़ने के अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक कारणों से पागल हो सकता है, इसलिए हम सब यहां इस प्रयोगशाला में मनुष्य को हाइबरनेशन (सुषुप्तावस्था) में पहुंचाने के लिए प्रयोग करेंगे। मुझे आशा है कि मानवता की भलाई के इस काम में मुझे आप सभी का पूरा सहयोग प्राप्त होगा।"

प्रयोगशाला के निर्माण के दौरान कस्बे के लोग प्रसन्न थे लेकिन अब वे उसके प्रति उदासीन हो गये थे। वैज्ञानिकों में से कभी कोई बाहर निकलता नहीं था और सारा शहर अपनी पुरानी चाल पर चल रहा था। साल पर साल बीत रहे थे। अन्तरराष्ट्रीय स्थिति अत्यधिक तनावपूर्ण थी। लेकिन दुनिया की तमाम राजनीतिक बातों से बेखबर यह प्रयोगशाला अपने काम में जुटी हुई थी। प्रयोगशाला में इतने वर्षों में, अर्थात सन १९६३ से १९७८ तक केवल एक नया व्यक्ति आया था और वह व्यक्ति था होंग फू। होंग फू प्रयोगशाला के रसोईघर का इंचार्ज बनकर आया था। सारा पहाड़ी शहर यह जानता था कि होंग फू बर्मी है। लेकिन होंग फू चीन की सरकार का गुप्तचर था। अपने देश में वह विज्ञान का जाना-माना छात्र था और उसे इस प्रयोगशाला के प्रयोगों को जानने के लिए भारत भेजा गया था। वह सप्ताह में एक बार होने वाली उस सभा की कार्रवाई का प्रत्यक्षदर्शी होता था जो प्रयोगशाला के भोजन कक्ष में नियमित रूप से होती थी।

१२ जनवरी १९७८ की शाम को शशिकान्त के सामने सभी वैज्ञानिक बैठे हुए थे और यह शाम प्रयोगशाला के इतिहास में महत्त्वपूर्ण थी, क्योंकि आज प्रयोगशाला के वैज्ञानिक अपने प्रयोगों की रिपोर्ट प्रस्तुत करने वाले थे। सबसे पहले निकोलाई शेवेंकोवस्की ने अपनी रिपोर्ट पढ़ी जिसका सार इस प्रकार था कि किसी भी जीव में सुषुप्तावस्था को उपलब्ध किया जा सकता है। इसके साथ सिर्फ एक समस्या जुड़ी हुई है कि मानव शरीर को भोजन की आवश्यकता पड़ेगी। शेवेंकोवस्की ने अपनी रिपोर्ट में आगे कहा, "मैंने कुछ ऐसे जानवरों, जैसे कुत्ते आदि पर प्रोफेसर लुबुसेत



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

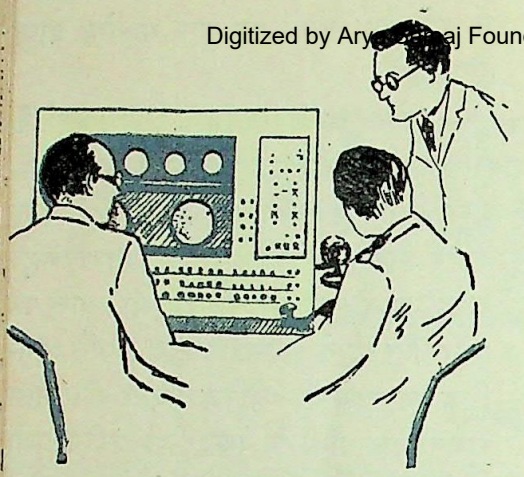

**प्रयोगशाला के वैज्ञानिक अपनी-अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर रहे थे**

की बनायी हुई ओषधि का प्रयोग किया। ओषधि में कोई विषाक्त तत्त्व नहीं हैं और इससे स्तनपोषी जीव तीन से चार वर्ष तक सुषुप्तावस्था में रह सकता है। मैंने प्रयोगों के दौरान दो कुत्तों को डा. शशिकान्त द्वारा बनाया गया पोषक तत्त्व, जिसका वैज्ञानिक नामकरण डा. शशिकान्त ने एन. एफ. २ किया है, दिया और दो कुत्तों को मैंने कोई बाह्य तत्त्व या खाद्य नहीं दिये। इन दोनों कुत्तों की मृत्यु हो गयी। एक और कुत्ते को समय से पहले मैंने झकझोर कर जगा दिया था। उसकी भी मृत्यु हो गयी। मुझे शीरीं सुलेमान ने बताया कि दो कुत्ते तो भोजन की कमी से मरे और तीसरे कुत्ते की मृत्यु हृदय गति रुकने से हुई। मैं समझता हूं कि अब हम प्रो. लुबुसेत द्वारा बनाये गये मिश्रण का मनुष्य पर प्रयोग कर सकते हैं।"

शेवेंकोवस्की के पश्चात अब्दुल शीरीं सुलेमान ने अपनी रिपोर्ट में इस बात की पुष्टि की कि प्रोफेसर लुबुसेत की ओषधि का प्रयोग मनुष्य पर किया जा सकता है।

जीव-रसायनशास्त्री न्यूमैन ने अपनी रिपोर्ट में विस्तृत रूप से बताया कि ओषधि का सुषुप्तावस्था में जीव-द्रव्य पर कोई खराब प्रभाव नहीं पड़ेगा और यह उनकी संरचना को किसी प्रकार से विकृत नहीं होने देगी तथा इससे जीव के गुण-सूत्रों पर भी कोई असर नहीं पड़ेगा, बल्कि सुषुप्त होने से मनुष्य की आयु बढ़ेगी, अर्थात बुढ़ापे का रोग सुषुप्तावस्था में मनुष्य को नहीं सतायेगा। इसके बाद हैरी विलियम्स ने बताया कि जिस समय जीव सुषुप्त अवस्था से जागृत अवस्था में आयेगा, उस समय उसे कोमलतम संगीत सुरों की आवश्यकता होगी। अगर उसे मशीनों की गड़-गड़ाहट जैसी आवाज के बीच में उठना पड़ेगा तो उसके पागल होने का खतरा होगा।

इन रिपोर्टों के बीच होंग फू ने कई बार चाय तथा काफी के प्याले बदले। सभी वैज्ञानिक, यहांतक शशिकान्त भी लुबुसेत की रिपोर्ट सुनने के लिए उत्सुक थे। लुबुसेत ने धीरे-धीरे बोलना शुरू किया, "प्रोफेसर शशिकान्त के साथ मिलकर हम सबने सुषुप्त करने वाली इस ओषधि का निर्माण कर लिया है। आज १२ जनवरी है और मैं ओषधि में एक और महत्त्वपूर्ण प्रयोग करके जीव को ४० साल तक के लिए सुषुप्तावस्था में रखने की खोज पूरी कर लूंगा। प्रोफेसर शशिकान्त का एन. एफ. २ बिलकुल तैयार हो चुका है और इस एन. एफ. २ की दो मिलिलीटर किसी व्यक्ति के लिए एक सप्ताह से अधिक समय के लिए काफी होगी। प्रो. शशिकान्त की रिपोर्ट भी मैं ही आपको सुना रहा हूं। एन. एफ. २, जिसका फार्मूला आप लोग जान चुके हैं, एक ठोस पदार्थ है जो एक द्रव में घुलनशील है और सीधे रक्त के माध्यम से इंजेक्शनों से शरीर में पहुंचाया जा सकता है। दो किलो की एक एन. एफ. २ की सिल्ली चालीस साल तक शरीर को उपयुक्त पोषण दे सकती है। मैं समझता हूं कि आगामी दस दिनों में मैं अपनी ओषधि के फार्मूले को लिख भी लूंगा जिसे अभी तक मैंने आलस के कारण लिपिबद्ध नहीं किया है। एक महीने के बाद हम इस छोटे-से खूबसूरत



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहाड़ी शहर से चले जायेंगे जहां हमने अपने जीवन के १५ वर्षों तक तपस्या की है। आगामी दस दिनों बाद हम इन सारी रिपोर्टों को संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव के पास भेज देंगे।"

होंग फू ने खाना लगा दिया। वैज्ञानिकों ने बिलकुल चुपचाप अपना खाना समाप्त किया और अपनी-अपनी प्रयोगशाला में चले गये। उस रात तीन बजे सारी प्रयोगशाला में केवल लुबुसेत की प्रयोगशाला में प्रकाश की हलकी किरणें दिखायी पड़ रही थीं। यकायक लुबुसेत ने बड़बड़ाकर कहा, "मैंने सफलता प्राप्त कर ली।" और वह प्रसन्नतापूर्वक अपने शयनकक्ष में चला गया। उसकी प्रयोगशाला में एक कांच के बर्तन में एक भूरा पदार्थ रखा हुआ था। यही वह ओषधि थी जिससे आदमी ४० वर्ष तक सुषुप्त अवस्था में रखा जा सकता था। होंग फू ने लुबुसेत की प्रयोगशाला का दरवाजा खोला और शीघ्रता से उसने उस चूर्ण को एक थैले में डाला और चुपचाप बाहर निकल गया। प्रयोगशाला के चौकीदार ने जोरदार आवाज में उसे पुकारा और कहा, "ठहरो, कौन है? मैं गोली मार दूंगा!"

इस आवाज को सुनकर होंग फू भागने लगा। वह प्रयोगशाला से शहर के वाटर वर्क्स की ओर भाग रहा था। इस शोरगुल से शहर के कुछ और लोग भी जाग गये थे। होंग फू को लगा कि अब वह पकड़ ही लिया जायेगा उसने शहर को पानी सप्लाई करने वाली टंकी में सारा चूर्ण उलट दिया। वह आराम से नीचे प्रयोगशाला की ओर उतरने लगा। वहां से लौटकर होंग फू प्रयोगशाला के गैरेज में घुसा और उसने चुपचाप एक कार निकाली और वह चोरी पकड़े जाने के पूर्व ही शहर से दूर निकल भागा।

दूसरे दिन सारे शहर ने और प्रयोगशाला के वैज्ञानिकों ने वही पानी पिया जिसमें होंग फू ने वह चूर्ण मिलाया था। चार घण्टों के अन्दर सारा शहर बिलकुल मुर्दों की सी बस्ती में परिवर्तित हो गया। कुत्ते, बिल्ली, भैंस, गाय, बैल, मर्द, औरतें, बच्चे सभी सो गये थे। सारा शहर बिलकुल शांत था। ऐसा लग रहा था, जैसे किसी ने शहर को श्राप देकर सुला दिया हो। टेलीफोन और तार की खटखटाहट के बीच सभी कुछ चुपचाप पड़ा था।

तार और टेलीफोनों के उत्तर न मिलने तथा पहाड़ी कस्बे को पार करके आने वाले यात्रियों के विवरणों से सारे देश के अखबारों में तहलका-सा मच गया। केन्द्रीय सरकार की सैनिक टुकड़ी ने शहर की नाकेबन्दी कर दी। संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव तथा वैज्ञानिकों का एक दल शहर पहुंचा। सबसे पहले अनुसंधानशाला की तलाशी ली गयी। अनुसंधानशाला के वैज्ञानिकों की रिपोर्टों के आधार पर यह नतीजा निकाला गया कि सुषुप्त करने वाली ओषधि का आविष्कार कर लिया गया था। लुबुसेत की प्रयोगशाला में मिले चूर्ण का परीक्षण किया गया और यह बात साबित हो गयी कि ओषधि से चालीस साल के लिए सभी व्यक्ति सुषुप्त हो गये हैं।

तत्काल विज्ञानवेत्ताओं तथा राजनीतिज्ञों की बैठक बुलायी गयी। शहर के सभी सुषुप्त लोगों को एक बड़ी छोलदारी के अन्दर आरामदेह पलंगों पर लिटा दिया गया। शशिकान्त के एन. एफ. २ के फार्मूले से तत्काल इन सुषुप्त व्यक्तियों को भोजन दिया गया। कुत्ते, बिल्ली आदि को जहर के इंजेक्शन देकर समाप्त कर दिया गया। वैज्ञानिकों तथा महासचिव के निर्णय के अनुसार इन १२८१ व्यक्तियों, पांच गायों और एक बैल के लिए एक विशाल भवन का निर्माण करने की योजना बनायी गयी।

इस महान योजना के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने पांच वैज्ञानिकों के एक दल का चुनाव किया। चार महीने के अन्दर इस भवन का


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्माण होना था। इस अवधि के लिए सुषुप्त लोगों को एक विशाल अस्पताल में रखा गया जहां चौबीसों घंटे हलका-हलका संगीत सुनायी पड़ता था। अस्पताल के गलियारों में मोटी-मोटी कालीनें बिछी हुई थीं तथा सारे अस्पताल को साउंडप्रूफ बना दिया गया था।

वैज्ञानिकों और डाक्टरों का एक दल चौबीस घण्टे इन सुषुप्त लोगों की देखभाल तथा परीक्षण कर रहा था। इनके हृदय स्पन्दनों का ब्योरा दे रहा था और उनके चार्ट बना रहा था। हृदय की धड़कनों के अतिरिक्त सुषुप्त लोगों का सारा शरीर मृतप्राय-सा था।

ठीक एक महीने बाद वैज्ञानिकों के एक दल ने संयुक्त राष्ट्र संघ की एक विशेष समिति के सम्मुख निम्नलिखित रिपोर्ट प्रस्तुत की :

"दुर्घटनावश जो १२८१ व्यक्ति सुषुप्त हो गये थे उनके आरक्षण के लिए महासचिव के आदेशानुसार हम निम्नलिखित योजना प्रस्तुत कर रहे हैं। अपनी जानकारी के अनुसार हमारी यह योजना पूर्ण रूप से वैज्ञानिक है और हमें आशा है कि चालीस साल बाद जब डाक्टर शशिकान्त और उनके सहयोगी जागेंगे तब वे विज्ञान की सेवा करने में समर्थ होंगे।

"हमारी राय यह है कि इस सारी योजना को गुप्त रखा जाय तथा इसके निर्माण करने वालों को इनके विषय में कुछ भी न बताया जाय। सुरक्षा और विज्ञान की दृष्टि से यह आवश्यक है।

"हमारी एकमत राय है कि एक गुम्बद-नुमा मकान का निर्माण किया जाय। इस मकान का पूरा क्षेत्रफल कम से कम चार वर्ग किलोमीटर हो। इस भवन का नाम संयुक्त राष्ट्र संघ की गुप्त फाइलों में एच. ई. रखा जाय।

"एच. ई. में पारदर्शी दीवालें बनायी जायेंगी। उनको भेदकर रेडियोधर्मी विकिरण अन्दर नहीं जा सकेगा। यह सारा गुम्बद एक बड़े भारी कमरे की तरह होगा। इसमें १२७९ चारपाइयां लगी होंगी और इन चारपाइयों पर कृत्रिम रेशों के बिछौने बिछे होंगे। गुम्बद को बिलकुल बन्द कर दिया जायगा। इसमें से दूषित वायु के बाहर निकलने का इन्तजाम तो होगा, लेकिन बाहर की वायु इसके अन्दर किसी भी हालत में प्रविष्ट नहीं हो सकेगी। सुषुप्तावस्था में किसी भी प्रकार का दूषित वातावरण शरीर को सड़ा-गला सकता है, जैसा कि अस्पताल में रखे इन १२८१ व्यक्तियों में दो के साथ हो चुका है। हमारी राय में इन दोनों व्यक्तियों को इस एच. ई. में नहीं रखा जाना चाहिए।

"एच. ई. की सारी व्यवस्था अमरीकी कम्प्यूटर तथा सोवियत इलेक्ट्रो-ओटोमेटानों से की जा सकेगी। एच. ई. के अन्दर प्राण-वायु बनाने की रासायनिक क्रिया को काम में लाया जायगा। कम्प्यूटर इस प्राणवायु की ठीक मात्रा का निर्माण करेंगे। भोजन की समस्या का हल डा. शशिकान्त का एन. एफ. २ कर चुका है। इस ओषधि को एच. ई. के दूसरे छोर पर बने रिजर्वायर में रखा जायगा जहां से इसे कम्प्यूटर नियंत्रित करेंगे। भोजन की उपयुक्त मात्रा, अर्थात प्रति व्यक्ति

**एच. ई. के अलग-अलग निर्मित ढांचों को सावधानी पूर्वक जोड़ दिया गया**

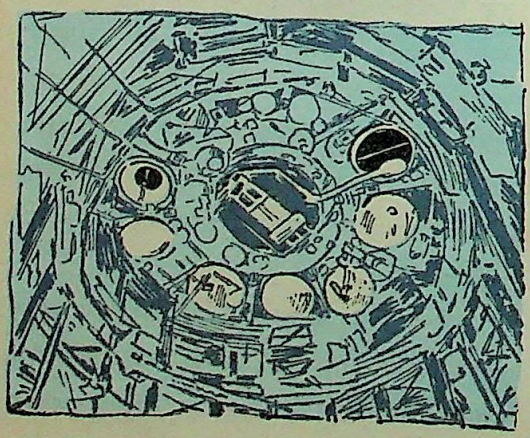



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रति सप्ताह दो मिली. एन. एम. ए. ए हुं चाने के लिए एच. ई. के अन्दर ट्यूबों का जाल बिछाना होगा । सप्ताह में एक बार कम्प्यूटर के आदेश से यह द्रव इन ट्यूबों के माध्यम से हमारे सुषुप्त साथियों के शरीर में पहुंच जायगा । प्रत्येक चारपाई के पास ऐसे भोजन का प्रवन्ध भी आवश्यक है जो खराव न हो, क्योंकि जागते ही सवसे पहले इन लोगों को ठोस भोजन की आवश्यकता पड़ेगी । डा. शशिकान्त तथा उनके वैज्ञानिक सहयोगियों की मेजों पर इस गुम्वद को खोलकर वाहर निकलने की विधि लिखी होगी । गुम्वद को वाहर से किसी भी हालत में नहीं खोला जा सकेगा, इसलिए इसकी सम्पूर्णता के लिए एक रिपोर्ट हमने अलग से बनायी है । एच. ई. को वन्द करने की विधि से मात्र हम पांच व्यक्ति परिचित हैं और इस राज को हम लोग अपने साथ ले जायेंगे, क्योंकि विज्ञान का सर्वोपरि नियम मानव जीवन की रक्षा करना है ।''

इस गुप्त रिपोर्ट पर संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य राष्ट्रों के प्रधान मंत्रियों ने एक गुप्त बैठक में विचार-विमर्श किया । चालीस व्यक्तियों को निर्माण के लिए चुना गया । उन्हें गोपनीयता की शपथ दिलवायी गयी और संसार के अलग-अलग कोनों में दुनिया के महान वैज्ञानिकों के निरीक्षण में एच. ई. के अलग-अलग भागों का निर्माण कार्य शुरू हुआ और इन भागों को सैनिक गोपनीयता के नियमों के अन्तर्गत अलग-अलग मार्गों से भारत के उस पहाड़ी क्षेत्र में पहुंचाया गया जहां हरी-भरी घाटी के वीच इस पूर्व निर्मित ढांचे को पांच वैज्ञानिकों के निरीक्षण में चालीस व्यक्ति जोड़ रहे थे ।

इस सारी निर्माण योजना में एक खरव रुपये व्यय हुए । ठीक १७ अप्रैल को एच. ई. को वन्द कर दिया गया । अपने आप में पूर्ण सुषुप्त नागरिकों की यह वस्ती विलकुल शान्त हो गयी । गुम्वद के अन्दर एक इन्द्रजाल-सा दिखायी पड़ता था । गुम्वद की छत मटियाली थी । एच. ई. की ऊंचाई ६० मीटर थी जिसमें चारों ओर जो पारदर्शी हिस्सा था वह २० मीटर था । वाकी ऊपर का हिस्सा विशेष पेंट से भूरे रंग में रंगा गया था ताकि आकाश से यह दिखायी न पड़े । वैज्ञानिकों की चारपाइयों के साथ मेजें लगी हुई थीं जिनमें दुर्घटना का पूरा विवरण और गुम्वद खोलने की विधि रखी हुई थी । एच. ई. के एक कोने में गौशाला थी जहां सूखी हुई घास में गाय और बैल सोये हुए थे ।

···और धीरे-धीरे संसार इस दुर्घटना को विलकुल भूल गया था । विज्ञान कांग्रेसों में इसका जिक्र भी नहीं होता था । संसार की राजनीतिक स्थिति भी अत्यधिक तनावपूर्ण होती गयी ।

दुनिया के शान्तिप्रिय देशों के तमाम प्रयत्नों के वाद भी सन २००१ के जून में तृतीय विश्व युद्ध आरम्भ हो गया । छुटपुट झड़पों से आरम्भ हुआ यह युद्ध परमाणु तथा हाइड्रोजन वमों के विस्फोट से समाप्त हुआ । दुनिया के अधिकांश भाग रेडियोधर्मी धूल और रेडियोऐक्टिवता से विलकुल वीरान हो गये थे । संसार के किसी-किसी भाग में विलकुल मरुभूमि का साम्राज्य हो गया था और चारों ओर एक निर्जीव सन्नाटा छा गया था । प्राणिमात्र के दर्शन वहुत कम होते थे । सारे संसार की आवादी कुछ हजार रह गयी थी । हंसती-खेलती दुनिया को आदमी की सत्ता की भूख ने समाप्त कर दिया था । दुनिया अव फिर से किसी मनु की प्रतीक्षा कर रही थी ।

× × ×

एच. ई. के कम्प्यूटर कैलेंडर में १३ जनवरी २०१८ की तारीख चमक रही थी । शशिकान्त को लगा, कहीं दूर कोई वहुत ही



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

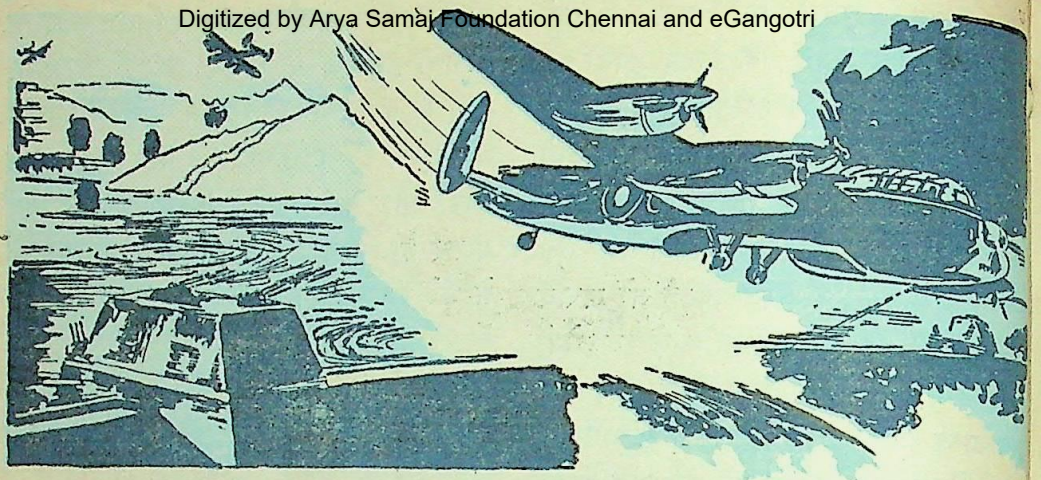

एटम और हाइड्रोजन बमों से व्यापक विनाश हुआ था

कोमल स्वरों में वीणा बजा रहा है। किसी भारतीय राग की कोमल तान सुनायी पड़ रही थी। अर्ध-जागृतावस्था में उन्हें अपने चारों ओर सृजन का संगीत सुनायी पड़ रहा था। वे यकायक पूर्णरूप से जागृत हो गये। उन्हें जोरों से भूख लगी और संसार-प्रसिद्ध वैज्ञानिक ने अपनी चारपाई के बगल में रखे हुए सुरक्षित भोजन से भूख की तृप्ति की। भूख समाप्त होने के बाद उन्होंने चारों ओर नजर दौड़ायी। उन्हें ऐसा लगा, जैसे वे किसी बहुत बड़े गर्भाशय के अन्दर कैद हो गये हों। उनके पास ही सन १९७८ में वैज्ञानिकों की लिखी हुई रिपोर्ट पड़ी थी। बाहर अन्धेरा छा गया था। एच. ई. के बाहर का संसार घुप अंधेरे में छिपा हुआ था। कृत्रिम प्रकाश के सहारे उन्होंने शीघ्र ही सारी रिपोर्ट पढ़ डाली। वह आश्चर्यचकित-से रह गये थे। लेकिन यकायक उन्हें खयाल आया, उनके साथ १२७८ व्यक्तियों का जीवन जुड़ा हुआ है जो चार घण्टों के अन्दर अन्दर जाग जायेंगे।

उन्होंने अपनी मेज पर रखे माइक्रोफोन को चालू किया और सौर बैटरियों की जांच की।

तब तक सभी वैज्ञानिक जाग चुके थे। उस एच. ई. के सभी निवासी जरा देर बाद ही जागने वाले थे। शशिकान्त ने अपने सहयोगियों को सारी बात समझा दी। अभी अन्धेरा ही था कि एच. ई. के सभी निवासी जाग गये। खाना खाने के बाद उन्हें होश आया कि वे उस पहाड़ी नगर में नहीं है। चालीस साल तक बिलकुल शान्त रहने वाले गुम्बद के अन्दर कोलाहल-सा मच गया और उसी समय उन्हें शशिकान्त की धीर-गम्भीर आवाज माइक्रोफोन से आती हुई सुनायी दी। शशिकान्त ने उस पहाड़ी शहर में हुई वैज्ञानिक दुर्घटना का विवरण सारे लोगों को सुनाया। कुछ मिनटों तक सभी सन्नाटे में आ गये और तभी चारों ओर प्रकाश छा गया।

शशिकान्त तथा वैज्ञानिकों को ही नहीं, अपितु एच. ई. के सभी निवासियों को बाहर का दृश्य देखकर ऐसा लगा, जैसे उन्हें सांप सूंघ गया हो।

गुम्बद की पारदर्शी दीवारों के पास सब लोग खड़े थे। बाहर की सारी दुनिया जलकर खाक हो गयी थी। दूर-दूर तक पहाड़ी पर राख के ढेर दिखायी पड़ रहे थे। वनस्पति भी अजीबोगरीब किस्म की दिखायी पड़ रही थी।

शशिकान्त अपने साथियों के साथ फिर मंत्रणा करने लगे। उन लोगों ने रिपोर्टों को


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर से पढ़ा। एच. ई. के गुम्बद में बेतार यंत्र रखा था। उसका एरियल गुम्बद के सिर से एक विशेष विधि से बाहर निकाला गया।

घण्टों के परिश्रम के पश्चात भी संयुक्त राष्ट्र से सम्पर्क स्थापित नहीं हो सका।

सारी आबादी घबरायी हुई थी। शशिकान्त के धैर्य से वे धीरज रखे हुए थे। अन्त में यह तय किया गया कि आज का दिन तथा रात एच. ई. में ही गुजारी जाय।

उसी रात अन्धेरे में शेवेंकोवस्की और हम्फ्री न्यूमैन चुपचाप गुम्बद से बाहर निकले।

ठीक दो घण्टे बाद वे लौटकर एच. ई. के अन्दर आये। शशिकान्त तथा उनके अन्य वैज्ञानिक साथी दोनों की बातें सुनने को उत्सुक थे। शेवेंकोवस्की ने कहा—"प्रोफेसर, ऐसा लगता है, दुनिया तबाह हो गयी है। हमारे पास यहां जो नक्शा है उसके अनुसार हम कुमायूं की हरी-भरी पहाड़ियों में हैं, लेकिन यहां कुछ भी हराभरा नहीं है। रेडियोऐक्टिवता का असर फिर भी इस इलाके में कम है। दुनिया हमारे सुषुप्तावस्था काल में परमाणु युद्ध की आग में जलकर भस्म हो गयी है। इन पहाड़ी इलाकों में तो परमाणु और हाइड्रोजन बमों से विनाश नहीं हुआ, लेकिन यहां अन्य प्रकार के बमों तथा रोगाणु बमों से विनाश किया गया होगा। मैं और हम्फ्री यह समझते हैं कि अब हमें अर्थात एच. ई. के निवासियों को नयी सृष्टि बसानी होगी। हमारे पास अभी एन. एफ. २ काफी बड़ी मात्रा में है, लेकिन हमारी आंतों को भरने का साधन ज्यादा से ज्यादा दो महीने चल सकता है। पानी का टेस्ट तो हम लोग दिन में कर चुके हैं। वह ठीक है। लेकिन हमारे पास जो पांच पशु हैं, उनके चारे का क्या होगा। हमें एच. ई. को तो छोड़ना ही पड़ेगा। मैं कल सुबह डा. शशिकान्त का नाम इस छोटे-से नये समाज के नेता के रूप में प्रस्तुत करूंगा। बस, अब आशा यही है कि हम लोग और अधिक उत्तर की ओर बढ़ें। शायद वहां खेती के योग्य जमीन मिल जाय।"

हम्फ्री ने थके हुए स्वर में शेवेंकोवस्की की बात का अनुमोदन किया।

दूसरी सुबह प्रोफेसर शशिकान्त ने दो घण्टे के अपने भाषण से एच. ई. के सभी निवासियों का हृदय जीत लिया। उन्होंने अपने भाषण के अन्त में कहा, "आपके साथ हम सब उत्तर की ओर जायेंगे और मैं तथा हमारी यह परिषद, जिसका चुनाव आपने इस नये समाज को चलाने के लिए किया है, अभी एक बैठक करेंगे। हम सिर्फ खाद्यान्न और एन. एफ. २ को साथ लेकर आगे बढ़ेंगे।"

परिषद की बैठक में यह तय हुआ कि विज्ञान की सभी उपलब्धियों को यहीं एच. ई. के अन्दर छोड़ दिया जाय। परिषद की बैठक के बाद फिर आम सभा में बोलते हुए डा. शशिकान्त ने कहा, "हमने निर्णय किया है कि हम विज्ञान के किसी भी साधन को अपने साथ नहीं ले जायेंगे। जो कपड़े हम पहने हैं, वही इस सभ्यता की अन्तिम चीज होगी जिसे हम साथ ले जायेंगे। हम एन. एफ. २ को भी साथ नहीं ले जायेंगे। जिस विज्ञान की प्रगति ने हमारे सुखी संसार को उजाड़ दिया, उसे हम भूल जायेंगे और अगर हमें उचित स्थान मिल गया तो हम खेती करेंगे—ऐसी खेती जिसमें मशीनों और विज्ञान का कोई हाथ नहीं होगा। मैं और मेरे वैज्ञानिक साथी अब विज्ञान से कोई सहायता नहीं लेंगे। हम विज्ञान को भूल जायेंगे। हम लोग एक नया खेतिहर समाज बनायेंगे। कल हम लोग एच. ई. को छोड़ देंगे। पशुओं के अलावा सब चीजें यहीं छोड़ जायेंगे।"

दूसरी सुबह एक लम्बा काफिला पहाड़ी की ओट में नूतन सृष्टि बसाने के लिए चल दिया। काफिले के अन्त में शशिकान्त थे।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


# English
# WORK BOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded.*
- An interesting technique is used to teach the young pupils how to write sentences correctly. They learn by doing and by doing *correctly.*
- Exercises are so arranged that even slow children are sure to make *rapid progress.*
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The work books are graded and are suitable for use in middle and high schools.

**Book I.....Price : 80 P.**
**Book II.....Price : Re. 1-00**
**Book III.....Price : Re. 1-20**

*For further enquiries please write to :*

Sri Ram Mehra & Co.
EDUCATIONAL PUBLISHERS, AGRA




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# कीड़े की देन....रेशम

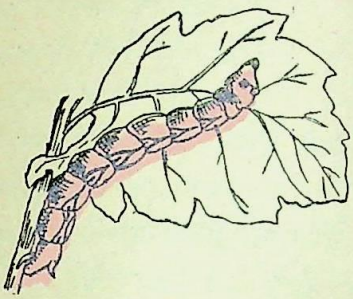

## एक कीड़ा जिसके हम रेशम-उद्योग के लिए आभारी है

**रतनकुमार टण्डन**

रेशम एक प्रकार के कीड़ों द्वारा प्राप्त होता है जिन्हें रेशम के कीड़े के नाम से पुकारा जाता है। रेशम अथवा सिल्क मलबरी सिल्क वर्म 'बौमबैक्स मोरी' नामक कीट द्वारा पैदा होता है। यह शहतूत के पत्तों को खाता है। इस कीड़े के कैटरपिलर जब अण्डे के बाहर निकलते हैं तब लगभग ६ मिमी लम्बे होते हैं। ये चिकने और हलके सफेद-पीले रंग के होते हैं। इनके पांच जोड़ी टांगें होती हैं। शुरू-शुरू में यह कीड़ा बहुत खाता है और बड़ी जल्दी बढ़ता है और ४ से ६ सप्ताह में पूरी तरह बढ़ जाता है। यह ४ बार केचुल बदलता है। पूरा बड़ा लार्वा ७½ सेमी लम्बा होता है। जब कैटरपिलर पूरा बड़ा हो जाता है तब वह खाना बन्द कर देता है और बेचैनी हालत में हो जाता है और अपनी दूसरी शक्ल बदलने के लिए एकान्त स्थान ढूंढ़ने लगता है। जब उसे कोई उपयुक्त स्थान मिल जाता है तब वह एक चिपचिपा पदार्थ निकालता है जो हवा के संपर्क में आकर लम्बा सिल्क का डोरा बन जाता है। यह धागे कैटरपिलर के चारों ओर एक खोल बनाते हैं जिसे हम 'कोकून' कहते हैं। यह धागों का कोकून ३ या ४ दिन में तैयार हो जाता है। कोकून के अन्दर से १२ से १६ दिनों के बाद कीट बाहर निकलता है जो निकलने के तुरन्त बाद संभोग करता है और मादा कीट ३०० से ४०० सफेद अण्डे शहतूत के पत्तों पर देती है। बाद में कीट मर जाता है।

मनुष्य ने इस कीट को लगभग ४००० वर्षों से पाला है। इस लम्बे अरसे में यह कीट उड़ना तो जैसे भूल ही गया है। यह अब जैसे बिलकुल पालतू बन गया है और जंगली अवस्था में नहीं पाया जाता। बौमबैक्स की अन्य जातियां भी सिल्क पैदा करती हैं। इसकी ६ जातियां भारत में पाली जाती हैं। हालांकि सबसे अधिक सिल्क शहतूत की पत्तियों पर पलने वाले रेशम के कीड़ों द्वारा ही प्राप्त किया जाता है, फिर भी अन्य पत्तियों पर भी सिल्क के कीट पैदा होते हैं। यह कीट भारत और आसपास के देशों में बहुतायत से मिलते हैं। टसर सिल्क भी इन्हीं कीटों द्वारा प्राप्त होता है जो असन (टरमिनेलिया टोमेन्टोसा) की पत्तियों, साल (शोरिया रोबस्टा), अर्जुन (टरमिनेलिया अर्जुना) और बेर (जाइजाइफस जुजुबा) आदि की पत्तियों पर भी पलते हैं। मूंगा सिल्क सोम (टिटरौनथेरा मोनोपिटेला) की पत्तियों और चम्पा (माइचेलिया ओबलौगा) की पत्तियों पर पलने वाले 'एनथेरी एसामेन्सिस' कीटों द्वारा प्राप्त किया



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

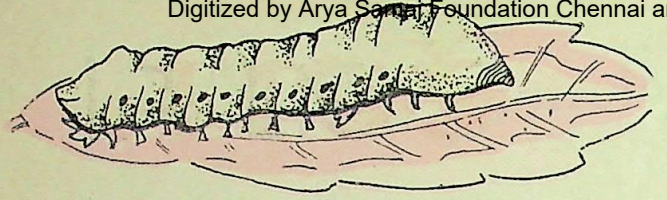

केटरपिलर खूब पत्तियां खाता है और तेजी से बढ़ता है

जाता है। रेंड़ी की पत्तियों को 'अटैकस रिसीनी' कीट खाते हैं और 'इरी सिल्क' पैदा करते हैं। यह सभी कीट भारत और आसपास के देशों में बहुतायत से पाये जाते हैं।

**रेशम के प्राकृतिक गुण**

रेशम के धागे बहुत ही हलके और पतले होते हैं। २५ ग्राम वजन के रेशम के धागे की लम्बाई लगभग एक लाख मीटर होती है। हालांकि यह बहुत महीन होता है फिर भी इसमें बड़ी मजबूती होती है। बराबर नाप के लोहे से अगर इसकी मजबूती की तुलना की जाय तो यह उसका ⅓ भाग होता है। यह बहुत लचीला लगभग २० प्रतिशत होता है जिसका मतलब यह हुआ कि अपनी लम्बाई का पांचवां हिस्सा यह लम्बाई में खींचा जा सकता है और बाद में छोड़ देने पर अपनी लम्बाई प्राप्त कर लेता है।

**रेशम की रासायनिक बनावट**

इसका प्राकृतिक धागा लगभग 8 की शक्ल का होता है। रासायनिक परीक्षण से पता चलता है कि इसके दो भाग होते हैं। एक तो भीतर का चिपचिपा भाग 'सिरीसिन' और उसके ऊपर 'फिबरौयन' या धागे का आवरण होता है।

इसके अतिरिक्त बहुत कम मात्रा में रंगीला और मोम जैसा पदार्थ होता है। यह दोनों ही पदार्थ प्रोटीन की श्रेणी में आते हैं। फिबरौयन का ७० से ८० प्रतिशत भाग पानी में घुलनशील नहीं है जबकि सिरीसिन आसानी से पानी में घुल जाता है। इन दोनों का रासायनिक सूत्र इस प्रकार है :

फिबरौयन—$C_{15}H_{13}N_5O_6$

सिरीसिन—$C_{15}H_{55}N_5O_9$

**रेशम उत्पन्न करने की क्रिया**

रेशम कैटरपिलर के अन्दर उसकी पाचन नली के दोनों ओर स्थित लम्बी ट्यूब जैसी घुमावदार ग्रंथियों द्वारा पैदा होता है। प्रत्येक ग्रंथि 'फिबरौयन' एक धागे की शक्ल में बाहर निकालती है जो पहले तरल पदार्थ के रूप में होता है। ऊपर की अतिरिक्त ग्रंथियां सिरीसिन निकालती हैं जो दोनों को चिपकाती जाती है। कैटरपिलर के शरीर का सिकुड़ना इन दोनों धागों के निकलने में सहायक होता है।

**रेशम के कीड़े को पालने का व्यवसाय**

यह रेशम के व्यवसाय की प्रथम सीढ़ी है। जो लोग शहतूत पैदा करते हैं उनके लिए यह उपयोगी है। जापान, चीन, थाईलैण्ड, भारत, अरब और यूरोप में यह व्यवसाय पूरी तरह पनप चुका है। इस व्यवसाय में सफलता तभी प्राप्त की जा सकती है जब कैटरपिलर की खाने-पीने की उचित व्यवस्था रहे और उनके बढ़ने के तापमान और सफाई आदि की दखभाल ठीक से होती रहे। १५° से ३०° सें० का तापमान 'सिल्कवर्म हाउस' में उचित रहता है, हालांकि २०° से २३° सें० और इसी प्रतिशत की आर्द्रता में भी इसकी उत्पत्ति ठीक प्रकार होती है।

कैटरपिलर कोकून में : प्यूपा में परिवर्तित होने से पहले

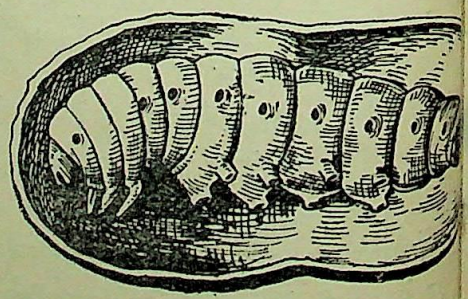



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शहतूत के रेशम के कीड़े बड़ी सावधानी से रखे जाते हैं। इनके अण्डों को सिल्क के बीज भी कह सकते हैं जो २२° सें. तापमान पर नियंत्रित यन्त्र इन्क्यूबेटर में रखे जाते हैं जहां इनसे लार्वा निकलते हैं जिन्हें कैटरपिलर कहते हैं। इन्हें शहतूत की पत्तियों के टुकड़े खिलाते हैं और पहला केंचुल बदलने के बाद इन्हें ताजी पत्तियां खिलाते हैं और साफ तश्तरियों में पालते हैं जब तक कि ये पूरे बड़े नहीं हो जाते। इस अवस्था में लकड़ी के टुकड़े, फूस, कागज की छीलन आदि उपयुक्त पदार्थ तश्तरियों में रख दिया जाता है। लार्वा उन पर चढ़ता है और कोकून बुनता है। यह सब कार्य एक उपयुक्त वातावरण में किया जाता है।

ठंडे देशों में कोकून की एक ही फसल उत्पन्न करते हैं, जबकि गर्म देशों में कई-कई फसलें मिलती हैं। फिर भी ठंडे देशों से प्राप्त कोकून उच्च कोटि के होते हैं।

जहां इन्हें पालते हैं वहां कोकून को तुरन्त फैक्ट्रियों को बेच दिया जाता है। फैक्ट्रियों में धागे निकाले जाते हैं। अगर ऐसा मुमकिन न हो तो इन्हें गर्म पानी में डाल देते हैं या जमा देते हैं ताकि कीड़ा उसमें से निकलकर सिल्क के धागों को खराब न कर डाले। कोकून को गर्म करने की क्रिया को 'स्टिफिंग' कहते हैं जिससे इस कीड़े के प्यूपा मर जाते हैं।

फिर कोकून को उनके रंग और बनावट के अनुसार अलग करते हैं। यहां विशेषज्ञ इनके

**आधा किलो कच्चा रेशम ४-५ हजार कोकूनों से प्राप्त होता है**

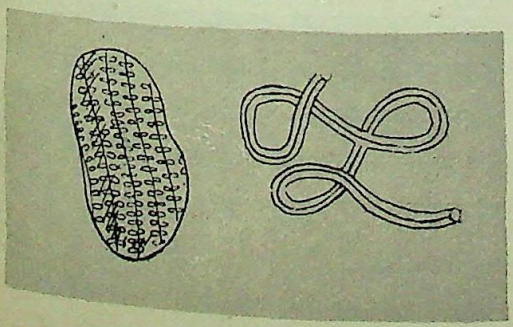

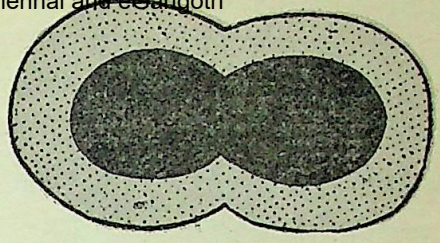

**कोकून को उबालने से प्यूपा मर जाता है और रेशम की राशि बच जाती है—नहीं तो प्यूपा कोकून को काटकर नष्ट कर दे और पतंगा बनकर उड़ जाये**

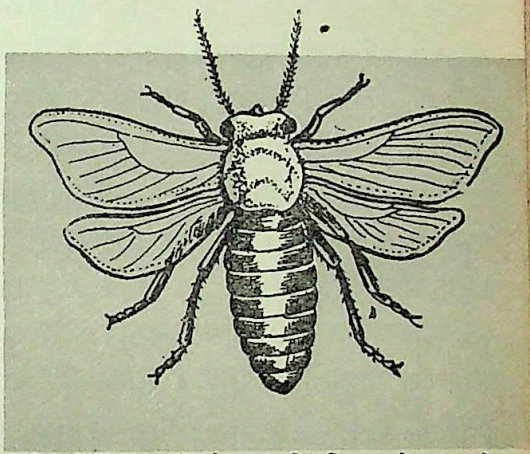

धागों को निकालते हैं। इसके लिए कोकून को गर्म पानी में थोड़ी देर भिगोकर बराबर ब्रश से घुमाते हैं। गर्म पानी में भिगोने से धागों को अलग करने में सहायता मिलती है क्योंकि उनकी चिपचिपाहट मुलायम पड़ जाती है।

कोकून के ऊपर से जो पदार्थ निकलता है उसे 'सिल्क वेस्ट' कहते हैं। यह बाद में 'स्पन सिल्क' बन जाता है। कई कोकून के धागों का आखिरी भाग सुई के छेद जैसे भाग से पिरो कर सिल्क के एक धागे का रूप धारण कर पाता है जोकि एक रील के रूप में लपेटा जाता है। इसे 'रॉ सिल्क' कहते हैं। बाद में इनके 'हैंक्स' बना कर फैक्टरियों में भेजते हैं। आधा किलो रॉ सिल्क बनाने में ४००० से ५००० कोकून लगते हैं। यह बाद में कपड़ों की बुनावट में काम आता है। इससे कई तरह के वस्त्र बनते हैं और विभिन्न तरह से प्रयोग



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है। टेलीफोन के कॉयल, रेसिंग मोटर के टायर, घाव के ड्रेसिंग आदि के लिए और वायु सेना के पैराशूट आदि में भी सिल्क का प्रयोग होता है। इसमें बड़ी मजबूती होती है इसीलिए इसका प्रयोग पैराशूट के लिए बड़ा उपयोगी सिद्ध होता है।

**भारत में रेशम व्यवसाय**

१९६८ में ३ करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा रेशम के निर्यात से अर्जित की गयी थी। इसका व्यवसाय मैसूर राज्य में बड़े पैमाने पर होता है। दिन प्रति दिन इसके व्यवसाय में प्रगति हो रही है। सेन्ट्रल सीरीकलचर रिसर्च स्टेशन, बरहामपुर में इस दिशा में अनुसंधान हो रहा है। कृत्रिम सिल्क भी अब बनने लगा है लेकिन फिर भी इस व्यवसाय में कोई कमी नहीं आ सकती क्योंकि महंगे और विलासी वस्त्रों की मांग अभी भी बहुत है और विदेशों में तो और भी ज्यादा मांग होती रहती है। इसके अतिरिक्त सेना की जरूरतों ने तो इस व्यवसाय को चार चांद लगा दिये हैं।

**रेशम के कीड़ों की बीमारियां**

रेशम के कीड़े कई बीमारियों से मरते हैं। इनके कैटरपिलर हल्के बादामी रंग के होकर मरने लगते हैं। इसी कारण १९वीं शताब्दी में यूरोप में सिल्क-व्यवसाय बरबाद हो गया था। इस रोग को 'पेबरीन' कहते हैं जो 'नोसेमा बौमबाइसिस' नामक प्रोटोजोआ पैरासाइट द्वारा उत्पन्न होता है। इसके बचाव के लिए कीड़ों का और उनके अण्डों का परीक्षण आवश्यक होता है। जिनमें 'पेबरीन' के जीवाणु दिखायी दें उन्हें मार देना चाहिए। इसके अतिरिक्त और छोटी-मोटी बीमारियां भी लगती हैं। इन बीमारियों का कारण है बुरी हवा, आदान-प्रदान की क्रिया, तापमान पर अनियन्त्रण और आर्द्रता या नमी, सड़ा-गला भोजन आदि।

**रेशम का इतिहास**

रेशम इतना पुराना है कि इसकी उत्पत्ति का सही अनुमान नहीं है। लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसकी उत्पत्ति चीन में ही हुई थी। चीन की एक पुरानी कथा के अनुसार वहां के राजा हुवैंगटी की पत्नी ने पहले-पहल २६४० ई. पू. में सिल्क व्यवसाय को प्रारम्भ किया था। लगभग ३००० वर्ष तक चीन रेशम के कीड़ों से रेशम उत्पन्न करने की क्रिया को गुप्त रखे रहा था जो बाद में दो विदेशी यात्रियों द्वारा कान्सटैन्टिनोपिल में फैला जहां वे इनके अण्डे छुपा कर ले गये थे। इटली में यह व्यवसाय १२०४ ई. में फैला जहां से यह अन्य यूरोपीय देशों में पहुंचा। ३०० ई. पू. में यह जापान और कोरिया में फैला और साथ-साथ भारत, स्याम और बर्मा में भी इसका प्रचार हुआ।

एक अन्य मत के अनुसार यह व्यवसाय हिमालय और भारत से शुरू हुआ जहां रेशम के कीड़ों का जन्मस्थान माना जाता है। पुरातन इतिहास में भी इसका वर्णन है, परन्तु हो सकता है कि वह 'टसर सिल्क' के बारे में हो।

जो कुछ भी हो, शुद्ध सिल्क से बहुत ही सुन्दर और विलासी वस्त्र बनते हैं। इसके वस्त्रों में जो विशेषताएं होती हैं, वे दूसरे वस्त्रों में नहीं होतीं। इसे कई रंगों में रंगा भी जाता है। इसे 'वस्त्रों की रानी' का नाम देते हैं। इसके व्यवसाय का अनुमान आप इस बात से लगा सकते हैं कि सिल्क व्यवसाय में ३५० करोड़ रुपये मूल्य का वस्त्र बनाया जाता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह कीड़ों द्वारा पैदा किया जाता है।

---



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# हाइड्रोजन से ग्रहों की यात्रा

चन्द्रकुमार मिश्र

यदि यह कहा जाय कि हाइड्रोजन में वह ऊर्जा निहित है जिससे हम ग्रहों की यात्रा तो कर ही सकते हैं, पृथ्वी की समस्त ऊर्जा आवश्यकता की भी पूर्ति कर सकते हैं, तो सहसा विश्वास नहीं होगा। एक गणना के अनुसार एक घन मीटर जल के हाइड्रोजन से २८,००,००,००० बी.टी.यू. (१ बी.टी.यू. उष्मा की वह मात्रा है जो एक पौण्ड जल का ताप १° फा. बढ़ा दे) ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है जो १० टन कोयले में निहित ऊर्जा के समान है।

अब प्रश्न यह है कि हाइड्रोजन से ऊर्जा कैसे उत्पन्न की जा सकती है। इसके लिए हमें मूल विषय से किंचित हटना पड़ेगा। हमें ज्ञात है कि हाइड्रोजन की परमाणु संख्या सबसे कम अर्थात् एक है। इसके दो आइसोटोप हैं, एक ड्यूटेरियम जिसके नाभिक में एक प्रोटान तथा एक न्यूट्रान होता है और दूसरा ट्रिटीयम जिसमें एक प्रोटान तथा दो न्यूट्रान होते हैं। अल्प परमाणु संख्या का एक तत्त्व हीलियम भी है जिसका आइसोटोप हीलियम-५ होता है। उसमें दो प्रोटान और एक न्यूट्रान होते हैं। सामान्य हीलियम परमाणु में दो न्यूट्रान तथा दो प्रोटान होते हैं।

**प्रारम्भिक प्रयोग : ऊर्जा की खोज**

सन् १९४५ में अमरीकी वैज्ञानिकों के एक दल ने कुछ महत्त्वपूर्ण खोजें की थीं। उन खोजों के अनुसार कुछ हलके तत्त्वों के नाभिक कुछ विशेष परिस्थितियों में एक-दूसरे से टकरा कर संगलित हो जाते हैं तथा ऊर्जा विकीरित करते हैं। उन्हीं खोजों से यह भी ज्ञात हुआ कि दो ड्यूटेरियम नाभिक संगलित होकर या तो एक ट्रिटान परमाणु, एक प्रोटान तथा ३९·८ लाख इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा उत्पन्न करते हैं या एक हीलियम-३ परमाणु, एक न्यूट्रान तथा ३२·५ लाख इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा उत्पन्न करते हैं।

एक अन्य ताप-नाभिकीय क्रिया के अनुसार एक ट्रिटान तथा एक ड्यूटेरियम परमाणु संगलित होकर हीलियम–४ परमाणु, न्यूट्रान तथा १७६ लाख इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा उत्पन्न करते हैं।

इसी भांति हीलियम-३ परमाणु ड्यूटेरियम से संगलित होकर हीलियम-४ परमाणु, प्रोटान तथा १८३ लाख इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा उत्पन्न करते हैं।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन क्रियाओं को हम निम्न प्रकार प्रदर्शित कर सकते हैं—

$D+D \rightarrow T+$ प्रोटान $+$ ३९·८ लाख इ. वो.

$D+D \rightarrow He^3+$ न्यूट्रान $+$ ३२·५ लाख इ. वो.

$T+D \rightarrow He^4+$ न्यूट्रान $+$ १७६ लाख इ. वो.

$He^3+D \rightarrow He^4$ प्रोटान $+$ १८३ लाख इ. वो.

(D=ड्यूटेरियम T=ट्रिटान)

जहां तक ऊर्जा का प्रश्न है अंतिम दो क्रियाएं अधिक लाभप्रद हैं। इन क्रियाओं की सत्यता को परखने के लिए प्रयोग के दौरान, तीव्र गतिमान ड्यूटेरान (ड्यूटेरियम नाभिक) की किरण भारी बर्फ (ड्यूटेरियम आक्साइड) पर फेंकी गयी। प्रयोग के अंत में यह तो निश्चित हो गया कि उपर्युक्त क्रियाएं सम्भव हैं, किन्तु उत्पन्न ऊर्जा, व्यय की गयी ऊर्जा से कम प्राप्त हुई क्योंकि नाभिक अत्यन्त सूक्ष्म आकार के होते हैं तथा अधिकतर ड्यूटेरान इन तक पहुंच नहीं पाते। ड्यूटेरान के न पहुंचने के दो कारण हैं—प्रथम यह कि ड्यूटेरान तथा नाभिक के मध्य विद्युत विकर्षण-बल कार्य करता है। केवल वे ही ड्यूटेरान पहुंच पाते हैं जो विकर्षण बल पर विजय प्राप्त कर लेते हैं अर्थात जो अत्यधिक ऊर्जायुक्त होते हैं। दूसरे यह कि ड्यूटेरान इलेक्ट्रान से आकर्षित हो जाते हैं जिससे उनकी ऊर्जा कम हो जाती है और वे नाभिक तक पहुंच नहीं पाते।

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि संगलित क्रियाओं से ऊर्जा प्राप्त करने के लिए ताप-नाभिकीय क्रियाओं के सिद्धांत का उपयोग करना आवश्यक है। ताप-नाभिकीय क्रियाएं सम्पन्न होने के लिए यह आवश्यक है कि कार्यकारी पदार्थ (ड्यूटेरियम इत्यादि) का ताप अत्यधिक हो जिससे नाभिक अत्यन्त तीव्र गति से इधर-उधर विचरण कर सकें तथा एक दूसरे से टकराकर संगलित हो सकें और ऊर्जा उत्पन्न कर सकें।

वह वैज्ञानिक तथ्य है कि सूर्य से विकीरित ऊर्जा ही ताप-नाभिकीय क्रियाओं का परिणाम है। वैसे तो सूर्य में अधिकतर हाइड्रोजन है किन्तु हाइड्रोजन के अतिरिक्त हीलियम, आक्सीजन, नाइट्रोजन, सिलिकान, नियान, मैगनीशियम और आयरन भी है। सूर्य की बाहरी सतह का ताप ६०००° सें. है किन्तु केन्द्र का ताप १२ लाख डिग्री है। इतने उच्च ताप के कारण हाइड्रोजन ताप-नाभिकीय क्रियाओं के फलस्वरूप हीलियम में परिवर्तित होता रहता है और इस प्रकार ऊर्जा उत्पन्न होती रहती है।

**सूर्य : एक हाइड्रोजन बम**

सूर्य की तुलना कुछ अंश तक हाइड्रोजन बम से की जा सकती है। (हाइड्रोजन बम में ड्यूटेरियम या ड्यूटेरियम और ट्रिटान का उपयोग विस्फोटक के रूप में करते हैं तथा क्रिया को आरम्भ करने के लिए परमाणु बम का उपयोग करते हैं)। जब एक बार यह क्रिया आरम्भ हो जाती है तब बिना विस्फोटक पदार्थ को समाप्त किये रुकती नहीं जिसके फलस्वरूप विस्फोट हो जाता है।

शंका हो सकती है कि सूर्य में ही हाइड्रोजन बम की भांति विस्फोट क्यों नहीं होता? सूर्य की विशेषता यह है कि यदि ताप अति उच्च हो जाता है तो वह स्वतः फैल जाता है और ताप-नाभिकीय क्रिया का अवसर नहीं मिलता। दूसरा कारण यह भी है कि सूर्य में अधिकतर सामान्य हाइड्रोजन है, न कि भारी हाइड्रोजन। सामान्य हाइड्रोजन अनेक ताप-नाभिकीय क्रियाओं के पश्चात हीलियम में परिवर्तित होता है। उन क्रियाओं के फलस्वरूप कुछ ऐसे मध्यवर्ती नाभिक उत्पन्न होते हैं जो रेडियोधर्मी होते हैं। वे रेडियोधर्मी नाभिक जब तक कुछ आवेश उत्पन्न नहीं करते, तब तक वे आगे की ताप-नाभिकीय क्रियाओं में भाग नहीं ले सकते। जितने समय में नाभिक अपना कुछ आवेश बना पाते हैं, उतने समय में


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्य का ताप फैलकर कम हो जाता है। इस कारण सूर्य में ताप-नाभिकीय विस्फोट नहीं हो पाता। अतः आवश्यकता इस बात की है कि किस प्रकार लाखों अंश का ताप न केवल उत्पन्न किया जाये, बल्कि आवश्यकतानुसार उसे संग्रहीत भी रखा जाये।

सन् १९५६ में वैज्ञानिकों को ऐसा आभास हुआ था कि कदाचित 'शीत संगलन' भी सम्भव है। अमरीकी वैज्ञानिक लुई एलावारेज ने एक ऐसे कास्मिक किरण-कण—ऋण आवेशित—म्यू-मेसान की खोज की जो द्रव हाइड्रोजन में दो सामान्य हाइड्रोजन नाभिकों को संगलित कर देता था तथा स्वयं अप्रभावित रहता था। वह कण अन्य संगलन भी कर सकता था। परन्तु उस दिशा में अधिक प्रगति न हो सकी क्योंकि म्यू-मेसानों का जीवनकाल अत्यन्त ही अल्प (सेकण्ड का ५ लाखवां भाग) होता है और उस अवधि में अधिक से अधिक दो ही संगलन सम्भव हैं।

इससे यह तो निश्चित हो जाता है कि जब तक कोई ऐसा मेसान न प्राप्त हो जाय जिसका जीवन काल अधिक हो, तब तक 'शीत संगलन' सम्भव नहीं। अतः ऊर्जा ताप-नाभिकीय क्रियाओं से ही प्राप्त की जा सकती है। ताप-नाभिकीय क्रियाओं के आरम्भ करने तथा बनाये रखने के लिए दो बातें आवश्यक हैं—(१) लाखों अंश के ताप का उत्पादन तथा (२) ऐसे पात्र की व्यवस्था जो उस अति-उच्च ताप को सहन कर सके। प्रथम आवश्यकता के लिए यह निश्चित है कि सामान्य विधियों से वह अतिउच्च ताप प्राप्त करना सम्भव नहीं है। गैस वेल्डिंग द्वारा ३०००° सें. तथा विद्युत-आर्क द्वारा ४०००° सें. का ताप सम्भव है। यदि विद्युत को बड़े संघनित्र में एकत्र करके एकाएक लघु क्षणांश में निरावेश कर दिया जाये तो लाखों अंश का ताप सम्भव है।

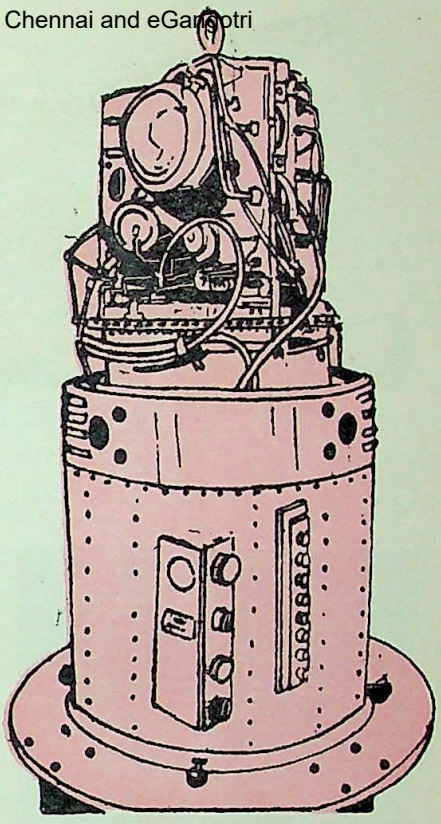

**चन्द्रयान अपोलो पर विद्युत उत्पन्न करने वाला यूनिट : इसमें तीन ईंधन-सेलें हैं जो रसायनों को—गरमी, दुर्गन्ध या अनुपयुक्त व्यर्थ पदार्थ उत्पन्न किये बिना ही—सीधे बिजली में परिवर्तित कर देती हैं। सेलों में ईंधन के रूप में हाइड्रोजन प्रयुक्त होती है**

हाइड्रोजन ऐसे ताप पर पूर्णतया आयनित हो जाता है अर्थात उसके दो खण्ड हो जाते हैं—धन आवेशित नाभिक तथा इलेक्ट्रान। इस प्रकार हाइड्रोजन दो विभिन्न गैसों का मिश्रण माना जा सकता है—इलेक्ट्रान गैस तथा हाइड्रोजन-नाभिक गैस। यदि उस आयनित गैस को यों ही छोड़ दिया जाये तो शीघ्र ही गैस ठंडी हो जायेगी। इलेक्ट्रान एक्स-किरणों के रूप में नाभिक के समीप पहुंचकर ऊर्जा विकीरित करते हैं जोकि नाभिक के आवेश पर निर्भर करती है। इसका महत्त्व ऊर्जा के ह्रास को कम करने के लिए है। ऊर्जा ह्रास को रोकने के लिए आवश्यक है कि हाइड्रोजन



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

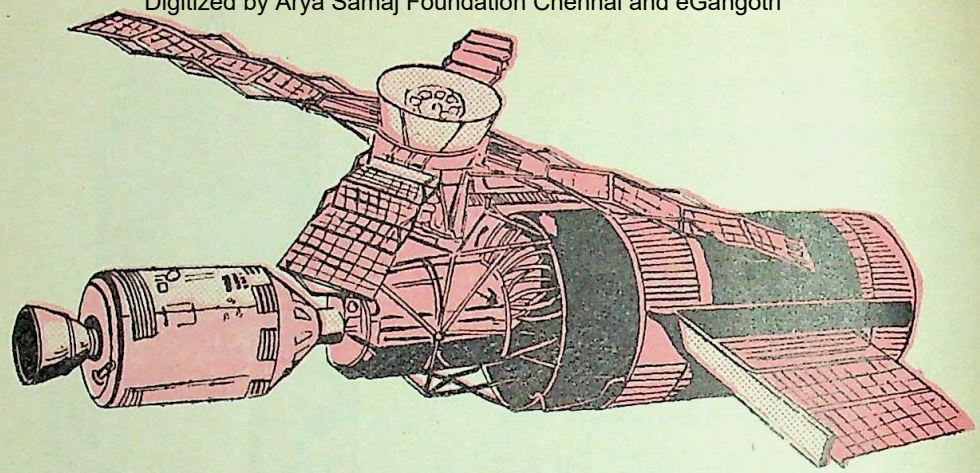

↑

प्रथम अमरीकी कक्षीय वर्कशाप 'स्काई-लैब' १९७३ में अन्तरिक्ष में भेजी जायगी। इसके द्वारा वैज्ञानिक धूमकेतुओं आदि के बारे में तो अनेक प्रयोग करेंगे ही, पृथ्वी पर कृषि तथा वनों का सर्वेक्षण करके भूगर्भ में छिपे बहुमूल्य खनिज भण्डारों का पता लगाने का भी प्रयास करेंगे

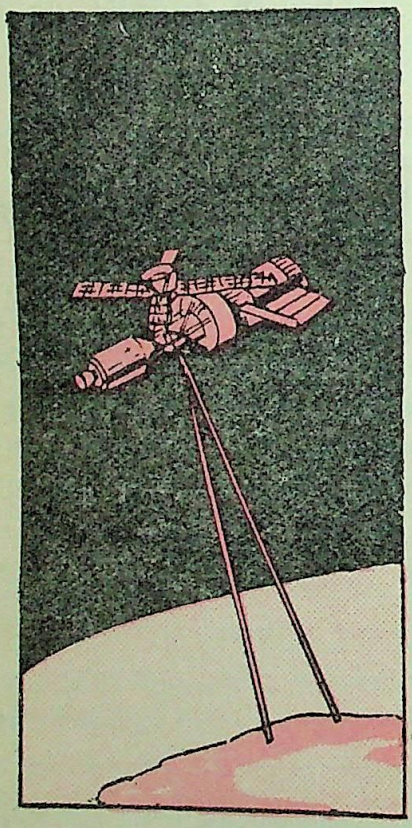

←

में कोई बाह्य पदार्थ प्रवेश न करे। साथ ही हाइड्रोजन पात्र की दीवार को स्पर्श न करे क्योंकि उतने उच्च ताप के स्पर्श में आते ही स्वयं पात्र भी वाष्पित हो जायेगा।

**पात्र समस्या का हल**

इस 'पात्र समस्या' का एक विचित्र हल एक वैज्ञानिक ने इस प्रकार दिया कि उपर्युक्त हाइड्रोजन को पात्र में न रखा जाये (हाइड्रोजन बम में ऐसा ही होता है)। संघनन-क्रिया आरंभ करने के लिए परमाणु-बम-विस्फोट का उपयोग किया जाता है। विस्फोट के तुरंत पश्चात सम्पूर्ण हाइड्रोजन में संघनन-क्रिया व्याप्त हो जाती है और ईंधन समाप्त हो जाता है। इससे एकाएक उच्च ताप उत्पन्न होता है। उस दौरान ईंधन-पात्र भी वाष्पित हो जाता है तथा ऊष्मा तीव्रता से इधर-उधर बिखर जाती है। उसी वैज्ञानिक ने यह भी सिद्ध किया कि यदि हाइड्रोजन-बम को भूमि के अन्दर विस्फोटित किया जाये तो उससे उत्पन्न ऊष्मा को विद्युत में परिवर्तित किया जा सकता है।

इस समस्या का दूसरा हल सूर्य से संबंधित है। सूर्य में प्रति सेकण्ड लाखों टन हाइड्रोजन संघनन क्रिया में व्यय हो जाता है तथा हाइड्रोजन और अन्य पदार्थ गुरुत्वाकर्षण के कारण बने रहते हैं। किन्तु यह क्रिया सूर्य तक ही सीमित है और पृथ्वी पर संभव नहीं।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

**चुम्बकीय बोतल**

इसका एक अन्य उपाय चुम्बकीय बोतल का सिद्धांत भी है। जब विद्युतधारा प्रवाहित होती है तब उसके चारों ओर चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है। इसी भांति जब उच्च ताप पर हाइड्रोजन गैस (प्लास्मा) में विद्युतधारा प्रवाहित की जाती है तब धारा के चारों ओर चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है। चुम्बकीय क्षेत्र में धन तथा ऋण दोनों ही के आवेशित कण विक्षेपित हो जाते हैं। यदि चुम्बकीय क्षेत्र अधिक होता है तो कण ऐसे वापस आ जाते हैं जैसे दीवार से टकराकर वापस आये हों। इस प्रकार गैस दीवार से हटकर मध्य में एकत्र हो जाती है।

इस सिद्धांत पर अनेक ट्यूब बनाये गये हैं जिनमें ट्यूब की दीवार में विद्युतधारा प्रवाहित होकर मध्य की ओर आकर्षित हो जाती है। किन्तु यह स्थिति अत्यन्त अल्प क्षणों के लिए होती है तथा शीघ्र ही इनसे उत्पन्न प्लास्मा दीवार से टकरा जाता है। इस कठिनाई के निराकरण के लिए प्रयत्न हो रहे हैं।

एक अन्य कठिनाई ताप-मापन की भी है। ताप-मापन का कारण ज्ञात करना है कि कार्य ठीक दिशा में चल रहा है कि नहीं। जितनी अधिक विद्युत प्रवाहित की जायेगी उतना ही अधिक प्लास्मा दीवार से टकराकर ठंडा होता रहेगा तथा स्थिति पूर्ववत बनी रहेगी। इस कठिनाई के निराकरण के लिए यह भी सोचा गया कि संघनन क्रिया के कारण उत्पन्न न्यूट्रानों की प्रतीक्षा की जाये और उतने ताप का अनुमान लगाया जाये। इसमें भी एक कठिनाई यह आयी कि कभी-कभी विद्युत-दोलनों के कारण भी न्यूट्रान उत्पन्न हो जाते हैं। इन न्यूट्रानों का उत्पन्न होना हानिकारक है क्योंकि इसमें ऊर्जा की हानि होती है।

यह तो आप जानते हैं कि उस अति उच्च ताप को सामान्य तापमापी से नहीं मापा जा सकता; परन्तु एक विशेष सूत्र द्वारा ताप का अनुमान सही लगाया जा सकता है। उसके अनुसार जब स्वतंत्र इलेक्ट्रान नाभिकों के पास से निकलते हैं ये तीव्र चमक उत्पन्न करते हैं। उस चमक की तीव्रता तथा रंग से ताप ज्ञात किया जा सकता है।

**ऊर्जा-कर्षण तथा उसके उपयोग**

प्रश्न यह है कि इस संघनन क्रिया से ऊर्जा कैसे प्राप्त की जा सकती है? संघनन क्रिया से ऊर्जा ऐक्स-किरणों के रूप में प्राप्त होती है, जिसे किसी परिरक्षक में सोखकर ऊष्मा में परिवर्तित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त एक विधि और है। चुम्बकीय बोतल में चुम्बकीय क्षेत्र के कारण, ट्यूब के केन्द्र की ओर गैस केंद्रित हो जाती है जिसके कारण ऊष्मा उत्पन्न होती है। यह क्रिया विपरीत भी हो सकती है, अर्थात् यदि गैस को फैलने दिया जाये तो ऊष्मा चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न कर सकती है जिसे विद्युत में परिवर्तित किया जा सकता है।

एक अन्य विधि में तप्त प्लास्मा को चुम्बकीय क्षेत्र से प्रवाहित करते हैं। वह प्लास्मा चुम्बकीय क्षेत्र में लगे दो विद्युदाग्रों में विद्युत-विभव उत्पन्न करता है जिनसे विद्युत प्राप्त की

**मंगल ग्रह की यात्रा करने वाला अन्तरिक्ष यान मैरिनर-४**

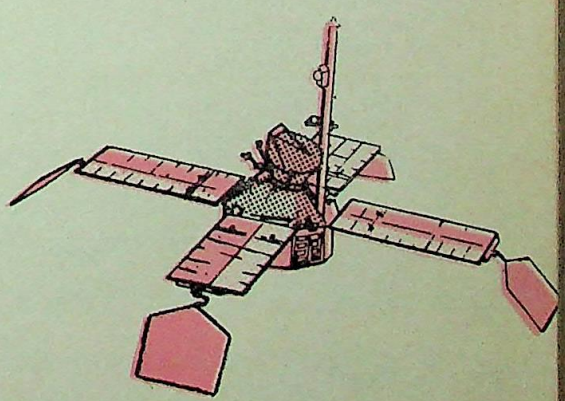



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा सकती है। इस विधि की विशेषता यह है कि इसमें सीधे विद्युत प्राप्त की जा सकती है जबकि अन्य विधियों में ऊष्मा-ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा तथा यांत्रिक ऊर्जा को विद्युत-ऊर्जा में परिवर्तित करना पड़ता है।

**प्लास्मा जेट**

इस चमत्कारिक प्लास्मा के अन्य उपयोग सामने आये हैं। हमारे देश में भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र ने प्लास्मा जेट बनायी है जिसका ताप लगभग ३०,०००° सें. है। इस जेट का उपयोग धातुकर्म, मृत्तिका उद्योग, तथा अन्य सैकड़ों क्षेत्रों में तो हो ही सकता है, अन्तरिक्ष यात्रा में इसके प्रमुख उपयोग की बड़ी ज्वलन्त संभावनाएं हैं।

---

समाचार पत्र पंजीयन (केन्द्रीय) कानून, १९५५ के आठवें नियम के साथ पढ़ी जाने वाली प्रेस तथा पुस्तक-पंजीयन कानून की धारा १९ 'डी', उपधारा 'बी' के अन्तर्गत अपेक्षित **'विज्ञान-लोक'** नामक समाचार-पत्र से सम्बन्धित स्वामित्व और अन्य बातों का विवरण—

**प्रपत्र ४**

| | |
|---|---|
| १. प्रकाशन का स्थान : | आगरा |
| २. प्रकाशन की आवर्तिता : | मासिक |
| ३. मुद्रक का नाम : | जगदीश मेहरा |
| राष्ट्रीयता : | भारतीय |
| पता : | हास्पिटल रोड, आगरा-३ |
| ४. प्रकाशक का नाम : | जगदीश मेहरा |
| राष्ट्रीयता : | भारतीय |
| पता : | हास्पिटल रोड, आगरा-३ |
| ५. सम्पादक का नाम : | शंकर मेहरा |
| राष्ट्रीयता : | भारतीय |
| पता : | हास्पिटल रोड, आगरा-३ |
| ६. कुल पूंजी के एक से अधिक शेयर वाले भागीदार : | मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा-३ |

मैं, जगदीश मेहरा, घोषित करता हूं कि मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सही हैं।

दिनांक : २० फरवरी, १९७२

**जगदीश मेहरा**
(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

**जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

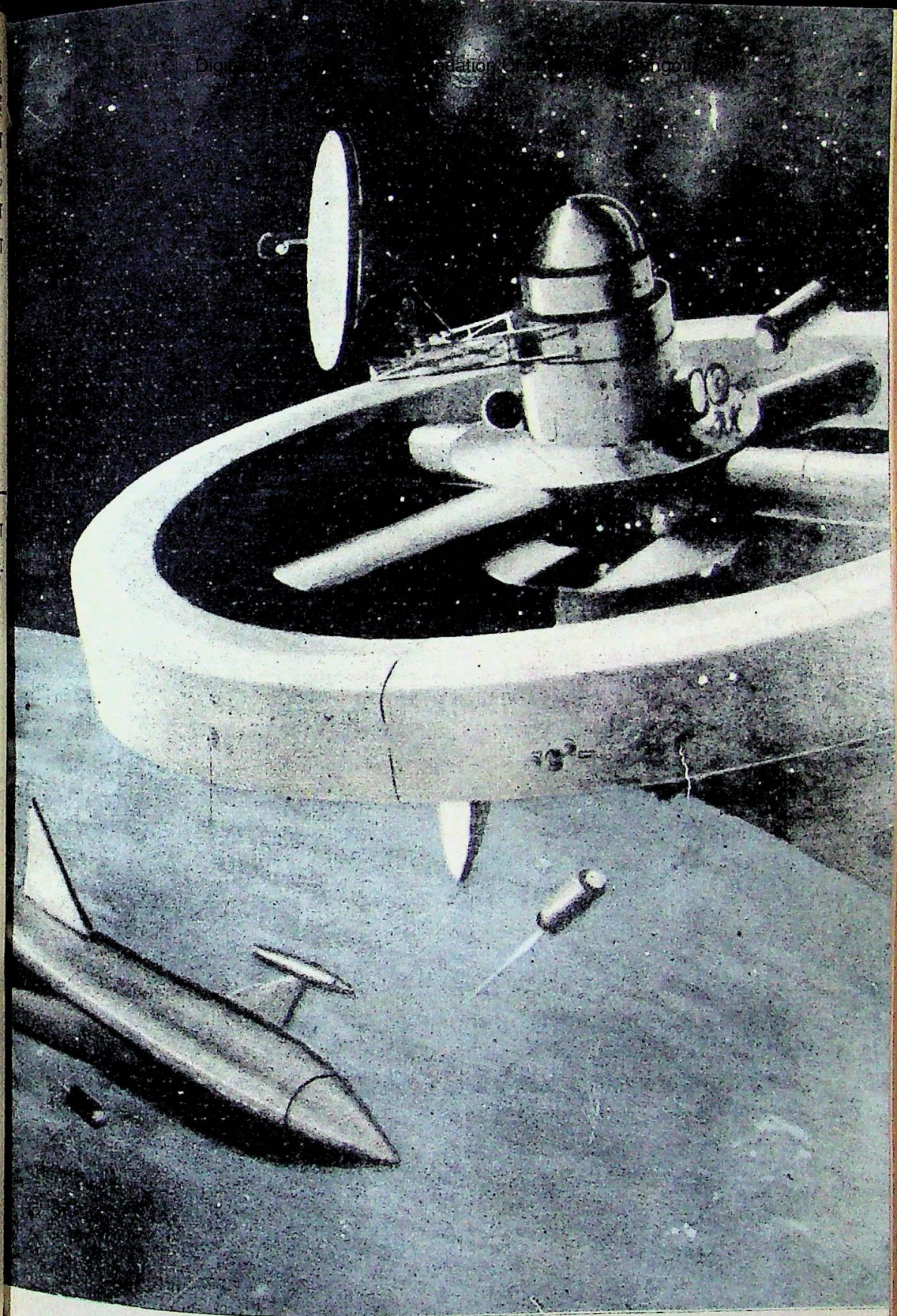

चन्द्रमा पर मानव चरण पहुंच चुके हैं। और भी लम्बी अन्तरिक्ष यात्राओं के लिए बीच-बीच में पड़ावों--स्टेशनों--की आवश्यकता पड़ेगी। कुछ-कुछ ऐसे होंगे ये अन्तरिक्ष स्टेशन। वेधशालाएं केन्द्र में रहेंगी, कर्मचारियों के कार्य करने तथा निवास का प्रबन्ध चारों ओर घूमने वाले घर में होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Registered with the Registrar of Newspapers for India under No. 6589/60
Price : Re. 1 VIGYAN JYOTI March 1972 Regd. No. L 1410
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## अप्रैल अंक के विशेष आकर्षण

# विज्ञान-लोक

### क्या कैंसर का उपचार सम्भव है ?

कैंसर ! इस एक शब्द में ही कितनी भीषण यातना छिपी है ! आज भी यह रो प्रायः असाध्य ही माना जाता है, और इसका उपचार बस मृत्यु ही समझी जाती है—ठी उसी प्रकार जिस प्रकार कुछ वर्ष पूर्व टी.बी.—किन्तु टी.बी. आज असाध्य रोग नहीं रहा क्या कैंसर का भी इलाज हो सकेगा ?

### हम अपने माता-पिता के समान क्यों नहीं हैं ?

सन्तान अपने माता-पिता के गुणों को प्राप्त कर किस प्रकार अपनी भावी सन्तान क देती है ? किन अवस्थाओं में सन्तान पूर्ण रूप से अपने जनक के समान होती है ? और क्य कारण है कि एक ही माता-पिता की सन्तानें परस्पर भिन्न होती हैं ? प्रकृति के इस अ किन्तु अचूक क्रम में एक झांकी ।

### हालोग्राफी

त्रिआयामी (थ्री-डाइमेन्शनल) फोटोग्राफी के लिए विशेष प्रकार के कैमरों क आविष्कार हुआ और उन चित्रों को परदे पर दिखाने के लिए विशेष प्रकार के प्रक्षेप (प्रोजेक्टर) प्रयोग किये गये । किन्तु लेसर के आविष्कार ने एक नये प्रकार की फोटोग्राफी— हालोग्राफी—को जन्म दिया है । क्या हैं इस नयी फोटोग्राफी के सिद्धान्त और इसके प्रयोग

### नये आविष्कार : कितने पिछड़े, कितने पुराने !

यदि मानव अपने आविष्कारों पर गर्व करता हुआ सोचने लगे कि उसी ने ये आविष्का प्रथम बार किये हैं, तो उसे सृष्टि के तुच्छ पशु-पक्षियों और कीट-पतंगों के लाखों-करोड़ों क पुराने पेटेंटों पर गौर करना चाहिए । उसकी सारी गलतफहमियां दूर हो जायेंगी । क्या ये पुराने पेटेंट ?

### स्पीड २—एल

यह वैज्ञानिक कहानी उस बदली हुई दुनिया की है जो सन् ३०५७ में जी रही थी औ जब सभी महाद्वीप एक देश बन गये थे । सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की यात्रा पर निकले दो अन्तरि यात्रियों की एक अकल्पनीय यात्रा का रोचक, रोमांचक विवरण ।

चित्रमय लेख साथ में सभी स्थायी स्तम्भ प्रत्येक पृष्ठ रंगीन
साज-सज्जा युक्त आकर्षक बहुरंगी मुखपृष्ठ

(20 मार्च तक प्रकाश्य)

एक प्रति Re. 1·00 : वार्षिक Rs. 12·00

अपनी प्रति आज ही अपने न्यूजएजेन्ट से सुरक्षित करा लीजिए या हमें लिखिए

**मेहरा न्यूजपेपर्स, हास्पिटल रोड, आगर**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

A.H.W.